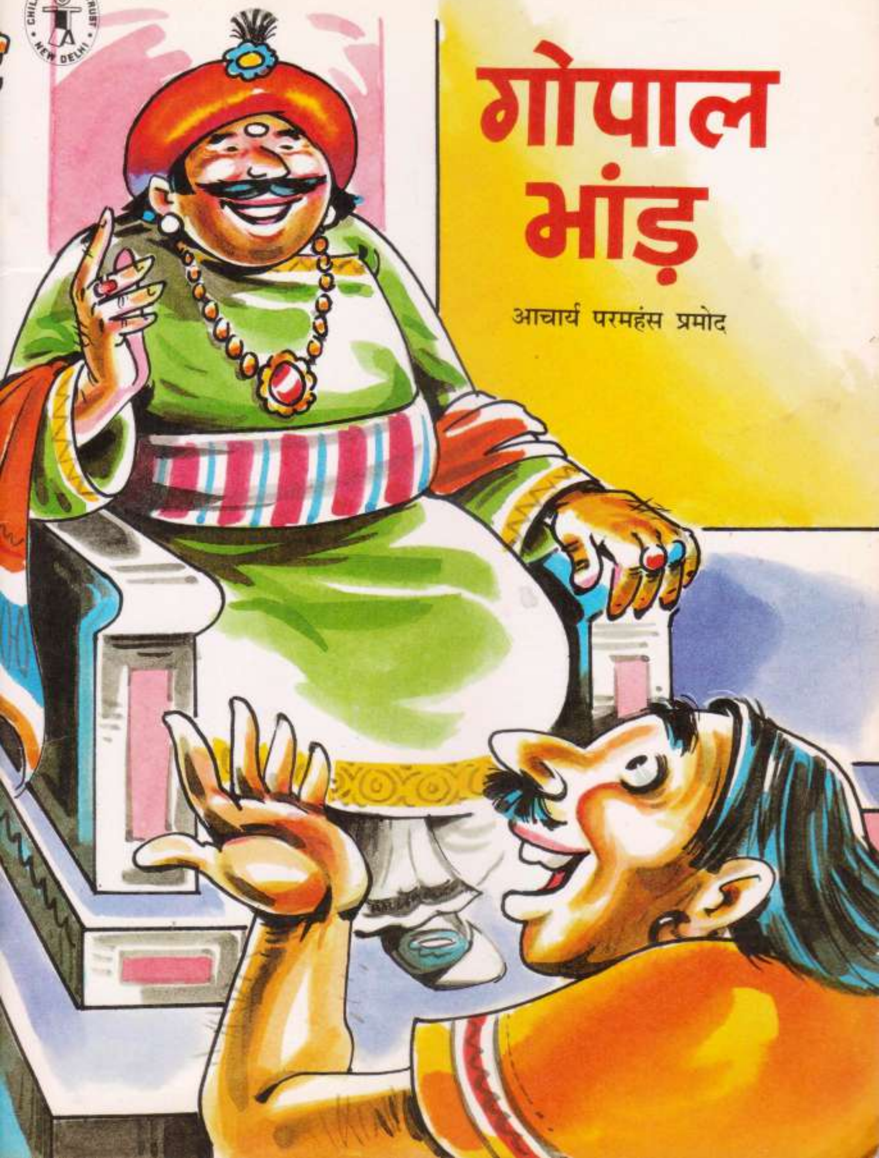
सी बी टी प्रकाशन

गोपाल भांड़

आचार्य परमहंस प्रमोद



गोपाल भांड़

लेखक : आचार्य परमहंस प्रमोद
चित्रांकन : प्रमोद कुमार

चिल्ड्रन्स बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली

चिल्ड्रन्स बुक ट्रस्ट द्वारा आयोजित प्रथम हिन्दी बाल-साहित्य लेखक प्रतियोगिता में गोपाल भांड़ नामक पुस्तक को 'हास-परिहास कथायें' वर्ग में द्वितीय पुरस्कार मिला था।

इस पुस्तक के लेखक आचार्य परमहंस प्रमोद, गोरखपुर, उत्तर प्रदेश के निवासी हैं और स्वतन्त्र लेखन कार्य करते हैं। उनके कई उपन्यास व कहानियां प्रकाशित हो चुकी हैं।

GOPAL BHAND

पुनर्मुद्रण 1993, 1994, 1998, 1999, 2001.

ISBN 81-7011-532-0

चिल्ड्रन्स बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित एवं न्यास के इंद्रप्रस्थ प्रेस, नेहरू हाउस,
4 बहादुरशाह ज़फर मार्ग, नई दिल्ली में मुद्रित।

संक्षिप्त परिचय

गोपाल भांड़ मात्र एक व्यक्ति विशेष का नाम नहीं, बल्कि 'भंड़ैती-युग' का एक इतिहास है। इतिहास में जहां कहीं भी कृष्णनगर (पश्चिम बंगाल) के महाराजा कृष्णचन्द्र के युग का उल्लेख आता है, तो साथ ही गोपाल भांड़ की याद भी अनायास ही आ जाती है।

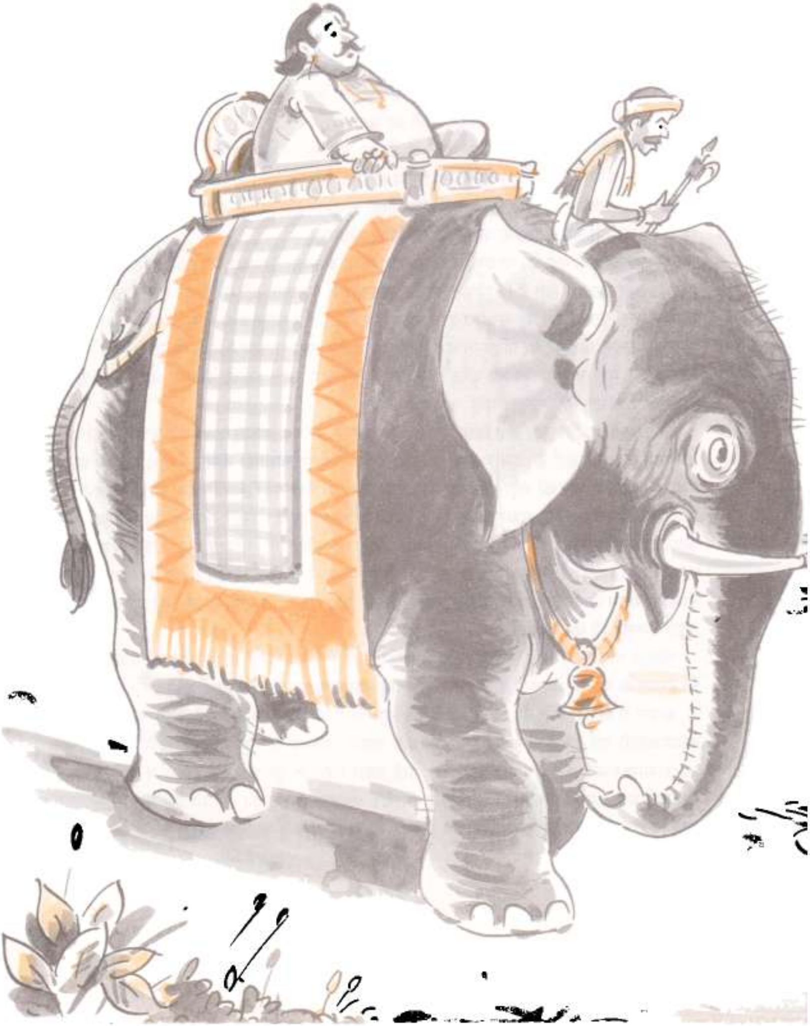
कृष्णनगर के उत्तर घुर्नी नामक एक गांव में गोपाल भांड़ का जन्म हुआ था। जब वह नौ वर्ष के थे तभी अचानक एक दिन उनके पिता का स्वर्गवास हो गया। घर की दशा अच्छी न होने के कारण उनकी शिक्षा-दीक्षा अच्छी तरह से न हो सकी। लेकिन पिता के जीवन काल में जो थोड़ी पढ़ाई-लिखाई हुई थी गोपाल ने उसी से अपनी प्रतिभा और बुद्धि का विकास किया।

गोपाल जाति के नाई थे। भोजपुरी की एक कहावत के अनुसार, "मनुष्यों में नऊआ, पक्षियों में कौवा महाधूर्त और चालाक होते हैं।" गोपाल भी इस कहावत के अपवाद नहीं थे। उनके बारे में खोज-बीन करने से पता चला है कि वह सचमुच ही बचपन से महाधूर्त और चालाक थे। उनकी इसी धूर्तता और चालाकी ने उन्हें भांड़ पद पर प्रतिष्ठित करा दिया था, जिससे आगे चलकर लोग उनके जाति-नाम 'नाई' को एकदम भूल गये। लोगों की दृष्टि में केवल दिखने लगे उनके भंड़ैती के गुण और अपनी इसी विशेषता के कारण वह 'गोपाल भांड़' कहलाये।

कहा जाता है प्रतिभा को चाहे कितना भी दबाया जाए लेकिन वह अवसर पाकर एक न एक दिन उभर कर सामने आ ही जाती है। एक व्यक्ति से दूसरे, दूसरे से तीसरे और फिर तीसरे से चौथे के पास बात पहुंचते-पहुंचते गोपाल की भंड़ैती की यश-गाथा जनमानस में फैल गई। उनकी भंड़ैती की रसिकता और बुद्धिमत्ता के चर्चे एक दिन महाराजा कृष्णचन्द्र के कानों तक भी पहुंचे। उन्होंने गोपाल भांड़ को एक दिन अपने दरबार में बुलाया और तरह-तरह से उनकी प्रतिभा की परीक्षा ली। गोपाल भांड़ परीक्षा की कसौटी पर खरे उतरे। फलस्वरूप महाराजा ने उन्हें अपनी राजसभा में स्थान दे दिया। महाराजा कृष्णचन्द्र के दरबार में स्थान मिलते ही गोपाल भांड़ की ख्याति में चार चांद लग गये। लोगों में पहले की अपेक्षा उनका आदर-सम्मान भी बढ़ गया।

गोपाल भांड़ का युग बीते लगभग तीन सौ साल हो गए, लेकिन उनकी हास्य-व्यंग्य की गाथाएं आज भी बंगाल के घर-घर में लोगों के मन को स्फूर्ति एवं आनन्द प्रदान करती हैं।

बंगाल में गोपाल भांड़ का वही स्थान है, जो उत्तर भारत में बीरबल का। अपने व्यंग्य, बुद्धि-चातुर्य, हाजिरजवाबी एवं हास्य-व्यंग्य के लिए बीरबल सम्राट अकबर के नव-रत्नों में शामिल थे। उन्हें आदर-सम्मान और अपूर्व ख्याति प्राप्त थी। उसी प्रकार महाराजा कृष्णचन्द्र के दरबार में गोपाल भांड़ को यथोचित आदर-सम्मान और प्रसिद्धि मिली। बीरबल के समान ही रसिक, चतुर-चालाक, हाजिरजवाब तथा कुशल हास्य-व्यंग्यकार होने के कारण ही गोपाल भांड़ को बंगाल का बीरबल कहा जाता है।



ऊपर भी हाथी—नीचे भी हाथी

होनहार बिरवान के, होत चीकने पात! यह घटना उस समय की है, जब गोपाल भांड़ बहुत छोटे थे। एक दिन एक भारी-भरकम और मोटे पेट वाला जमींदार एक भीमकाय हाथी पर सवार होकर कहीं जा रहा था। गोपाल को साथ लेकर उनकी मां आकर राजपथ पर खड़ी हो गईं और उंगलियों से इशारा करते हुए बोलीं, ''देख-देख, गोपाल कितना भारी-भरकम हाथी है!''

उस समय गोपाल उम्र में छोटे जरूर थे, लेकिन उनकी रसिकता और बुद्धि काफी परिपक्व हो चुकी थी। उनकी बातें बड़े-बूढ़ों के समान हुआ करती थीं। मां की बात सुनकर वह बोले, ''किसको देखूं मां, ऊपर भी हाथी—नीचे भी हाथी।''

गोपाल की बात सुनकर आसपास खड़े लोग ठहाका मारकर हंस पड़े।



गोदान का सांड़

एक बार बंगाल के नवाब मीरजाफर किसी कारणवश कुछ समय के लिए कृष्णनगर राज्य की सीमा के निकट शिविर लगाकर ठहरे हुए थे। संयोग की बात उसी समय महाराजा कृष्णचन्द्र के पिता का श्राद्ध-कर्म था। महाराजा ने श्राद्ध में पिता की आत्मा की शान्ति के लिए एक सांड़ दान दे कर खुला छुड़वा दिया। वह सांड़ घूमता-फिरता नवाब के शिविर के निकट से गुजरा। नवाब की लालची दृष्टि उस सांड़ पर पड़ी। नवाब के आदमियों ने उनके आदेश से उस सांड़ को पकड़ लिया। नवाब ने उसे अच्छी तरह से जांच-परखकर देखा और अपने बावर्ची को बुलाकर कहा, "देखो, यह बैल बहुत अच्छा है। कल इसका गोश्त पकाओ। बहुत स्वादिष्ट होगा।"

यह खबर महाराजा कृष्णचन्द्र के कानों तक भी जा पहुंची। गोदान में छोड़े गए सांड़ के वध की बात सुनकर वह बहुत चिन्तित हुए। यदि गोदान का सांड़ मारा गया तो उनके पिता की आत्मा को शान्ति नहीं मिलेगी। लेकिन सांड़ की मुक्ति का कोई उपाय उन्हें सूझ नहीं रहा था। शक्ति में वह मीरजाफर का मुकाबला नहीं कर सकते थे। यदि नवाब के पास निवेदन करते कि वह सांड़ उनके पिता के नाम पर छोड़ा गया है, तो भी उसकी रिहाई सम्भव न थी, क्योंकि नवाब की लोलुपदृष्टि उस पर पड़ चुकी थी। वह उदास मुख सिंहासन पर बैठे हुए थे एवं उनके दरबारी मौन साधे हुए थे। राजसभा में एकदम सन्नाटा छाया हुआ था।

उसी समय गोपाल भांड़ ने राजसभा में प्रवेश किया। वहां की दशा देखकर उन्होंने महाराजा से पूछा, "क्या बात है, हुजूर! आज दरबार में यह सन्नाटा कैसा?"

महाराज ने पूरी बात गोपाल भांड़ को बता दी। सुनकर वह बोले, "बस, इस छोटी-सी बात पर इतनी चिन्ता? मैं अभी जाकर नवाब के शिविर से सांड़ को छुड़ा अपने साथ लिए आता हूं।"

गोपाल की बात सुन कर मंत्री बोला, "गोपाल , काम इतना आसान नहीं है, जितना समझ रहे हो। मीरजाफर एक धूर्त और दुष्ट इन्सान है। सांड़ पर जब उसकी लालची नजर पड़ चुकी है, तो वह उसे कभी नहीं छोड़ेगा।"

"मंत्रीजी!" गोपाल ने कहा, "नवाब यदि धूर्त है तो मैं महाधूर्त हूं। आप अब मेरी भी करामात देखिए! मैं गया और आया। सांड़ लेकर आने में अधिक देर नहीं लगेगी।"

यह कहकर गोपाल भांड़ जाने लगे तो महाराजा कृष्णचन्द्र बोले, "गोपाल, यदि सचमुच तुम सांड़ को नवाब के शिविर से ले आये तो मैं तुम्हें दो सौ रुपये इनाम दूंगा।"

"महाराज, इनाम की रकम तैयार रखिए, मैं अभी सांड़ को लेकर आया।" गोपाल ने



कहा और तुरन्त राजसभा से निकलकर नवाब के शिविर की ओर चल दिया।

वहां पहुंचकर वह नवाब के वजीर से मिला। वजीर ने नवाब से गोपाल भांड़ का परिचय कराते हुए कहा, ''यह महाराजा कृष्णचन्द्र की राजसभा के प्रसिद्ध भांड़ गोपाल जी हैं।''

''क्या कहा, गोपाल भांड़! बड़ा नाम सुना है मैंने भी,'' मीरजाफर चौंककर बोला।

''जी, हुजूर! यही हैं गोपाल भांड़। अपनी भंड़ैती के लिए चारों ओर विख्यात हैं,'' वजीर ने जवाब दिया।

गोपाल भांड़ ने नवाब को सलाम करते हुए कहा, ''खुदावन्द, सुना आपका शिविर यहां लगा है तो दर्शन के लिए चला आया। आपकी मैंने बहुत शोहरत सुनी है। नवाब सिराजुद्दौला का साथ छोड़कर आपने बहुत अच्छा किया। सिराजुद्दौला बड़ा अत्याचारी था। उसे तो प्रजा भी पसन्द नहीं करती थी।''

गोपाल की चिकनी-चुपड़ी बातें सुनकर मीरजाफर का मन बाग-बाग हो उठा। उस समय सांड़ नवाब के शिविर के बाहर ही बंधा था। गोपाल भांड़ उसकी ओर संकेत करते हुए बोले, "और, हुजूर! यह सांड़ यहां कैसे आ गया?"

"तुम इसे पहचानते हो?" मीरजाफर ने पूछा।

गोपाल बोले, "जी हुजूर, बहुत अच्छी तरह पहचानता हूं, तभी तो पूछा है।"

"बहुत अच्छा बैल है," मीरजाफर ने कहा, "इसका गोश्त भी अच्छा जायकेदार होगा।"

"जरूर अच्छा होगा, हुजूर! इसमें क्या शक! लेकिन..."

"लेकिन क्या गोपालजी," नवाब ने पूछा।

"यह बैल घास-बिचौली कुछ नहीं खाता। सिर्फ गंदगी खाता है। इसके कारण तो लोगों का दिशा-मैदान जाना मुश्किल हो गया है। जो भी आदमी दिशा-मैदान के लिए जाता है, यह उसके पीछे-पीछे दौड़ता है। सारा समय गंदगी खाता है। यह महादुष्ट बैल है। अब आप ही सोचिए हुजूर, क्या आप इसका गोश्त खाना पसन्द करेंगे?"

गोपाल की बातें सुनकर नवाब का मन घृणा से भर आया और उसने हाथ के इशारे से एक आदमी को अपने पास बुलाकर कहा, "इस बैल को यहां से अभी भगा दो। तोबा-तोबा, गंदगी खानेवाले जानवर को कभी नहीं खाना चाहिए।"

नवाब का आदेश पाते ही उस आदमी ने सांड़ को खोलकर वहां से भगा दिया।

इसके बाद नवाब ने गोपाल को एक सौ रुपये देते हुए कहा, "गोपालजी, आपने मेरा बहुत उपकार किया, नहीं तो मैं गंदगी खानेवाले इस बैल का गोश्त खानेवाला था। बैलों की कुछ कमी तो नहीं, दूसरा मंगवा लेंगे। लेकिन आपके इस उपकार के लिए यह सौ रुपए आपका इनाम है।"

वह नवाब को सलाम कर मूंछों पर ताव देते हुए महाराज की राजसभा में आए और बोले, "हुजूर, किला फतह हुआ।"

नवाब ने सांड़ को छुड़वा दिया है, यह खबर महाराजा को पहले ही मिल गई थी। वह अपने वचन के मुताबिक दो सौ रुपए का पुरस्कार गोपाल के हाथों पर रखते हुए बोले, "अच्छा, गोपाल! यह तो बताओ, तुमने सांड़ को छुड़वाया किस तरह?"

गोपाल ने हंस कर कहा, "महाराज, मैंने ऐसी कोई खास बात नहीं की। सिर्फ इतना ही कहा कि यह सांड़ तो गंदगी खाता है। बस, इतना सुनना था कि नवाब को सांड़ से घृणा हो गई और उसने उसे छोड़ने की आज्ञा दे दी। ऊपर से एक सौ रुपए इनाम भी दिया।"

सुनकर महाराजा और उनकी सभा के लोग खूब हंसे।



जैसे को तैसा

महाराजा कृष्णचन्द्र के राज्य में कृष्णनगर स्थित गुप्तिपाड़ा के लोग गुण्डागर्दी के लिए इलाके में बहुत बदनाम थे। किसी को भी एक बार देखने पर उसके साथ शरारत किए बिना छोड़ते नहीं थे। यहां तक कि कोई अनजान मुसाफिर भी यदि उस रास्ते से गुजरता तो उसे भी उनकी दुष्टता का शिकार होना पड़ता था।

एक दिन खूब सजधज कर गोपाल भांड़ किसी जरूरी काम से गुप्तिपाड़ा होते हुए चले जा रहे थे। सफेद चमचमाती जरी के पाड़ वाली धोती, चमकता रेशम का लम्बा कुरता और कंधों पर कीमती कश्मीरी शाल में गोपाल भांड़ का राजसी ठाठबाट देखते ही बनता था।

गोपाल की राजसी वेशभूषा को देखकर गुप्तिपाड़ा के एक व्यक्ति को बड़ी ईर्ष्या हुई। उसे गोपाल भांड़ का ठाठबाट सहन नहीं हुआ। रास्ते के किनारे ही एक पोखर था। उस व्यक्ति ने पोखर से कीचड़ लेकर अपने दोनों हाथों, पैरों और शरीर के अन्य अंगों में अच्छी तरह मल लिया और जल्दी से गोपाल भांड़ के पास पहुंचकर उन्हें गले लगाते हुए बोला, "ओ रे, बड़ दा! आप इतने दिनों तक कहां थे? दादू आखिरी समय आपको ही याद करते-करते परलोक सिधारे और आप ने अपनी एक झलक तक नहीं दिखाई।"

गोपाल भांड़ समझ गए कि यह अपरिचित इन्सान कोई दुष्ट है और उनके कीमती कपड़ों को कीचड़ से गंदा करके यह नाटक कर रहा है। उन्होंने भी उस व्यक्ति को नसीहत देने की ठान ली और अपने कपड़ों पर लगे कीचड़ को दोनों हाथों में लेकर उस की दोनों आंखों और मुंह में अच्छी तरह लगाते हुए बोले, "ओ रे, मेरे लछिमन भाई! अब रोने-धोने से क्या होगा, किसी के दादू कभी ज्यादा दिन रहे हैं क्या?"

गोपाल भांड़ ने उस शरारती की आंख और मुंह में कीचड़ कुछ इस तरह से लगाया था कि वह एकदम भीतर तक चला गया, इस कारण उस दुष्ट को देखने और सांस लेने में कष्ट होने लगा। कुछ ही क्षण में उसकी हालत ऐसी हो गई कि उसकी दोनों आंखें जलने लगीं और मुख से थू-थू करते-करते उसे उलटी होने लगी। वह आंखों की जलन और उलटी के कारण तकलीफ से बिलबिला उठा।

आखिर इस संकट से उबरने का कोई उपाय न देखकर वह तेजी से गिरते-पड़ते पोखर की ओर भागा। वहां पानी से आंखें धोने और कुल्ला करने के बाद जब कुछ आराम मिला तो वह रोनी-सी सूरत लिए हकलाते-हकलाते बोला, "दादू! आपने यह क्या किया?"

गोपाल ने हंस कर जवाब दिया, "जैसे को तैसा।"





अबे अंधे दिखाई नहीं देता?

महाराजा कृष्णचन्द्र के दरबार में कभी-कभी एक ऐसा व्यक्ति भी आता था, जो कई भाषाएं जानता था और अवसर अनुसार भाषा का प्रयोग करता। कभी बंगला, कभी असमी, कभी उड़िया, कभी हिन्दी, कभी संस्कृत तो कभी-कभी फ्रेंच और जर्मन भी बोलता था। उसकी सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि सभी भाषाओं पर उसका समान अधिकार था। इसलिए लोग उसके बारे में यह अनुमान नहीं लगा सकते थे कि वह कहां का रहनेवाला व किस जाति का है और उसकी मातृभाषा क्या है।

महाराजा कृष्णचन्द्र एक दिन गोपाल भांड़ से बोले, ''गोपाल, यह व्यक्ति विद्वान तो है और इस कारण ही यह पता नहीं चलता कि यह किस राज्य, किस जाति का है और इसकी मातृभाषा क्या है? यदि तुम इस का ठीक पता लगा दो तो मैं तुम्हें इनाम दूंगा।''

महाराजा की बात सुनकर गोपाल बोले, "हुजूर, यह कोई बड़ी बात नहीं है। मैं दो दिन के भीतर ही बता दूंगा।"

गोपाल की बात पर मंत्री हंसकर बोला, "गोपाल, यह काम इतना आसान है नहीं! यह व्यक्ति तुमसे भी अधिक तेज है। सहज ही पकड़ में आनेवाला नहीं!"

गोपाल ने जवाब दिया, "मंत्रीजी, हो सकता है यह आदमी बहुत तेज हो। लेकिन मेरा भी नाम गोपाल है। देख लीजिएगा, इसकी असलियत का मैं पता लगाकर ही दम लूंगा।"

दूसरे दिन गोपाल को अपने आदमी से यह खबर मिली कि वह विद्वान व्यक्ति आज दरबार में आने वाला है। गोपाल भांड़ निश्चित समय से कुछ पहले ही राजसभा के द्वार के पास एक किनारे पर छिपकर खड़े हो गए। निश्चित समय पर वह व्यक्ति राजसभा के दरवाजे पर पहुंचा और जैसे ही भीतर प्रवेश करने लगा, भारी-भरकम गोपाल अपने छिपने के स्थान से बाहर निकले। बाहर निकलते ही वह उस व्यक्ति के साथ जोर से टकरा गये। इस अचानक धक्के से वह विद्वान चक्कर खाकर दरवाजे पर गिर पड़ा और उसे काफी चोट लगी। वह विद्वान कुछ क्षणों तक तो कराहता रहा। फिर संभलकर उठने का प्रयत्न करते हुए उड़िया भाषा में बड़बड़ाया, "अबे अंधे दिखाई नहीं देता क्या?"

गोपाल हंसकर बोले, "गालियां दो या कुछ और कहो, यह तो मालूम हो ही गया कि तुम उड़िया हो। गिरते समय तुम्हारे मुख से जो भाषा निकली वही तुम्हारी मातृभाषा है।"

बात महाराज के सामने पहुंची और उस बहुभाषी विद्वान ने यह स्वीकार किया कि वह उड़िया भाषाभाषी है। महाराज ने संतुष्ट होकर गोपाल की सूझबूझ और बुद्धिमत्ता की भूरि-भूरि प्रशंसा की और उन्हें अपने वचनानुसार एक सौ रुपया इनाम दिया।

जले मुंह सब अच्छा

महाराजा कृष्णचन्द्र हृदय से गोपाल भांड़ को बहुत चाहते थे। वह जब-तब गोपाल को राजमहल में अपने साथ भोजन करने के लिए निमंत्रित भी किया करते थे। एक दिन राजसभा से फुरसत मिलने पर गोपाल जब अपने घर जाने लगे तो महाराज बोले, "समय काफी हो गया है गोपाल! घर जाकर क्या करोगे? चलो, आज मेरे साथ ही खाना खा लो।"



गोपाल भी महाराज की कोई बात टालते नहीं थे। वह महाराज के एक बार कहने पर ही किसी भी काम के लिए राजी हो जाते थे। महाराज की बात सुनकर वह बोले, "हुजूर के आदेश पर तो मैं अपनी जान भी निछावर कर सकता हूं लेकिन यह भोजन की बात है। अनुरोध पर तो लोग भण्डार का भण्डार निगल जाते हैं। फिर मेरा पेट तो हाथी का है।" सुनकर महाराज हंस पड़े और बोले, "गोपाल, तुझसे पार पाना बड़ा मुश्किल है।" कहते हुए वह गोपाल भांड़ को साथ लेकर भोजनालय में चले गए।

भोजन की थाली सामने आने पर महाराज बोले, "अच्छा, गोपाल बतलाओ तो, इतने सारे व्यंजनों में से पहले किसे खाना चाहिए?"

गोपाल ने जवाब दिया, "हुजूर, पहले जला बैंगन (तला हुआ बैंगन) खाइए। उसके बाद और सब, जले मुंह अपने आप अच्छा लगेगा।"

गोपाल की बात सुनकर महाराज हंसने लगे।

जमाई बहुत अच्छा है, लेकिन...

एक दिन गोपाल किसी जरूरी काम से नन्दीग्राम जा रहे थे। खबर पाकर उनका एक पड़ोसी जो कट्टर वैष्णव था, गोपाल के पास आकर बोला, ''गोपाल, तुम नन्दीग्राम जा ही रहे हो तो मेरे जमाई की भी खोज-खबर लेते आना। बिटिया बिन्दु पिछले दिनों जब आई थी तो उसके बारे में जाने क्या-क्या कह रही थी? मेरी समझ में तो कुछ आया नहीं। वैसे जमाई का स्वभाव बहुत अच्छा है। तुमसे खूब पटरी बैठेगी। वह भी ऊंचे कुल की वैष्णव संतान है। बेमतलब कहीं भी आता-जाता नहीं। अनेक लड़कों को देखने-सुनने के बाद बिटिया की उससे शादी की है।''

लगभग एक सप्ताह बाद जब गोपाल भांड़ नन्दीग्राम से वापस आए तो उस वृद्ध वैष्णव ने गोपाल के पास आकर अपने जमाई का कुशल-क्षेम पूछा। गोपाल तो उसकी कट्टरता पर चोट करने का अवसर ढूंढ़ ही रहे थे। उस बूढ़े के पूछने पर बोले, ''अरे, दादू! तुम मुलाकात की बात करते हो! मैं हफ्ता भर वहीं ठहरा था।''

सुनते ही बूढ़ा फूलकर कुप्पा हो गया। स्वाभिमान से सिर ऊंचा उठा कर बोला, ''अच्छा, यह तो और भी अच्छा हुआ। फिर तो तुम्हें जमाई बाबू का परिचय खूब अच्छी तरह से मिल गया होगा। सच कहो गोपाल, मेरा जमाई कैसा लगा तुम्हें!''

''अरे, दादू! आपके जमाई बाबू का क्या कहना? वह बहुत अच्छे आदमी हैं लेकिन... ।'' गोपाल ने बात अधूरी ही छोड़ दी।

''लेकिन क्या, गोपाल।'' बूढ़े ने पूछा, ''वह ऊंचे कुल का खानदानी लड़का है। तुमने ऐसा क्या देखा उसमें?''

''कोई खास बात नहीं दादू! बस जरा प्याज के शौकीन हैं,'' गोपाल ने कहा।

''क्या कहते हो गोपाल! अरे बाबा, वह तो शुद्ध वैष्णव है। भला वैष्णव संतान प्याज खा सकती है क्या?'' बूढ़ा विस्मित स्वर में बोला।

''अरे, तो कोई रोज-रोज थोड़े ही खाते हैं। वह तो कभी-कभार शौकिया जब मांस-वांस खाते हैं तो उसके साथ जरा प्याज भी चख लेते हैं,'' गोपाल ने बूढ़े को समझाया।

''क्या बोलते हो गोपाल! मेरा जमाई मांस खाता है?'' बूढ़ा मुंह बिचकाकर बोला, ''वैष्णव-कुल का लड़का भी कभी मांस खाता है? मैं तो ऐसा सोच भी नहीं सकता!''

''तो इसमें घबराने की क्या बात है, दादू! वह रोज मांस तो नहीं खाते हैं। वह तो जब कभी थोड़ा पी लेते हैं, तभी खाते हैं,'' गोपाल ने हंसकर कहा।

''पी लेते हैं—मतलब...?'' बूढ़े ने अचकचाकर पूछा, ''क्या वह तम्बाकू पीता है?''



"ना-ना दादू! तम्बाकू नहीं, गुरुजनों के सामने भला तम्बाकू कैसे पी सकते हैं। पी लेते हैं माने थोड़ी शराब पी लेते हैं। पर एक बात जरूर है आपके जमाई खूब ज्ञानी आदमी हैं। सबके सामने थोड़े ही पीते हैं, ऐसा वह लोगों की नजर बचाकर करते हैं।"

"कैसी बात करते हो गोपाल, मेरा जमाई शराब पीता है?"

"अरे, तो रोज कहां पीते हैं? वह तो जब कभी इधर-उधर जाते हैं तो थोड़ी-सी पी लेते हैं?" गोपाल ने खिझाया।

"इधर-उधर जाते हैं, माने?" बूढ़े ने अचरज से पूछा।

"यही जब नाच आदि देखने जाते हैं तब पी लेते हैं।"

"तो क्या मेरा जमाई नाच आदि...?" बूढ़ा हताश स्वर में बोला।

"नहीं-नहीं दादू! आप गलत न समझें। जानते तो हैं, जमाना बदल रहा है। कुछ जवान-मनचले छोकरे आकर जब जमाई बाबू के पीछे पड़ जाते हैं तो उन्हें जाना ही पड़ता है।" बोलकर गोपाल चुप हो गए।

उनकी बातें सुनकर वह कट्टर धर्मांध और स्वाभिमानी बूढ़ा वैष्णव एकदम बेचैन हो उठा। उसमें अब इतनी हिम्मत नहीं रह गई थी कि वह गोपाल भांड़ से अपने जमाई के बारे में कुछ और पूछताछ करता। वह वहां से अशांत चित्त अपने घर चला आया। पास-पड़ोस वालों ने यह अच्छी तरह समझ लिया था कि गोपाल भांड़ ने उस कट्टर जातिवादी, धर्मांध वैष्णव का अभिमान तोड़ने के लिए ही उसके साथ जान-बूझकर यह मसखरी की थी।

जिन-जिन लोगों ने यह बात सुनी हंसते-हंसते उनका पेट फूल गया। लेकिन गोपाल की बात सुनकर कट्टर जातिवादी ब्राह्मण पुनः कभी जमाई का हाल-चाल जानने के लिए उनके पास नहीं आया और न ही उस दिन के बाद कभी अपने जमाई के घर गया।

कंजूस बुआ की फजीहत

महाराजा कृष्णचन्द्र की एक निस्संतान बुआ थी। वह बहुत धनी और अपार सम्पत्ति की मालिक थीं। लेकिन थीं वह परले दर्जे की कंजूस। यहां तक कि उनकी कंजूसी खाने-पीने और पहनने-ओढ़ने में भी देखने को मिलती थी। ज्यादा अच्छा खाने तथा अच्छा पहनने-ओढ़ने से अधिक खर्च होता है, इसलिए वह गरीबों जैसा साधारण भोजन करतीं और मोटे-झोटे कपड़ों से अपना काम चलाती थीं।

नाते-रिश्तेदारों ने उनसे कई बार कहा भी, "बुआ जी, तुम्हारे बाद तुम्हारी इस अथाह सम्पत्ति को भोगनेवाला तुम्हारा अपना सगा कोई नहीं इसलिए जीवन में अच्छा खा-पहन लो ताकि मरते वक्त किसी बात का पछतावा न हो।"



यहां तक कि महाराजा कृष्णचन्द्र ने भी उन्हें कई बार इस सम्बन्ध में समझाने का प्रयत्न किया, लेकिन बुआ जी थीं कि किसी के समझाने-बुझाने का उन पर कोई असर नहीं होता था। फालतू खर्च के नाम पर घर में सिर्फ एक बूढ़ी नौकरानी थी जो उनकी देखभाल करती थी। बुआ जी की ओर से उसे सिर्फ दो वक्त की रोटी मिलती थी। वेतन महाराजा देते थे।

एक दिन महाराजा ने गोपाल से कहा, ''गोपाल, तुम यदि मेरी बुआ जी के पास से कुछ ला सको तो मैं तुमको उसका दुगना इनाम दूंगा, क्योंकि मैं जानता हूं, तुम चाहे कोई भी हथकंडा दिखाओ, बुआ जी से एक धेला भी नहीं निकलवा सकते।''

"मैं पत्थर से भी रस निकालना जानता हूं महाराज," गोपाल ने जवाब दिया, "बुआ जी तो एक इन्सान हैं। आप देख लीजिएगा, चाहे जैसे भी हो, मैं उनकी जेब से कुछ न कुछ अवश्य ही निकलवा लूंगा।"

गोपाल के लिए राजमहल में आने-जाने पर किसी तरह की रोक-टोक न थी चाहे जनानखाना हो या मरदानखाना। महाराजा कृष्णचन्द्र का विशेष प्रिय पात्र होने के कारण राजमहल में बड़े-छोटे सभी गोपाल भांड़ को प्यार करते थे। गोपाल ने बुआ जी के महल के दरवाजे पर जाकर आवाज दी, "बुआ जी! बुआ जी!"

आवाज सुनकर बुआ जी बोलीं, "अरे कौन? गोपाल है क्या? आओ बैठो! कहो कैसे आना हुआ? कुशल से तो हो?"

"ऐसे तो सब ठीक ही है, बुआ जी!" गोपाल ने जवाब दिया, "आप जनक पण्डित को तो जानती हैं ना।"

"अरे, बाबा, इतने बड़े पण्डित को कौन नहीं जानता? लेकिन हुआ क्या जनक पण्डित को?" बुआ जी ने पूछा।

"जनक पण्डित को कुछ नहीं हुआ, बुआ जी! कल की बात है, वह अचानक दरबार में आ गए थे। मैंने उनको हाथ दिखाया था। उन्होंने बतलाया कि मेरी आयु सिर्फ छह महीने और है। उसके बाद मेरी मौत निश्चित है," गोपाल ने कहा।

"क्या कहते हो, गोपाल!" बुआ जी आश्चर्य से बोलीं, "तुम्हारी उम्र क्या मरने की है?"

"आप तो जानती ही हैं बुआ जी, जनक पण्डित अपने पेशे में खूब नाम कमा चुके हैं। उनकी बात पर तो अविश्वास का प्रश्न ही नहीं उठता। बहुत दिनों से आपके हाथ का प्रसाद पाने की इच्छा थी। इसीलिए आपके पास आया हूं। लोग मरने वाले की इच्छा पूरी करते हैं ताकि इहलोक छोड़ते समय उसे किसी बात का पछतावा न रहे। मुझे पूरा विश्वास है कि आप मेरी यह अंतिम इच्छा जरूर पूरी करेंगी।" गोपाल रुंधे स्वर में बोले।

"अरे, तो यह कौन-सी बड़ी बात है गोपाल," बुआ जी ने कहा, "तुम कल ही आ जाओ भोजन करने।"

"ना-ना, बुआ जी! मैं भोजन करने की बात नहीं कर रहा," गोपाल बोले, "मैं तो आपकी थाली का बचा हुआ प्रसाद पाना चाहता हूं।"

"अच्छा बाबा! तुम जो चाहते हो वही मिलेगा। कल आ जाओ," बुआ जी बोलीं।

दूसरे दिन गोपाल स्नान-ध्यान के बाद कुछ भूनी हुई छोटी-छोटी चिंगड़ी (झींगा) मछली धोती के फेंटे में छिपा, बुआ जी के घर जा पहुंचे। बुआ जी ने उनकी थाली लगानी चाही, लेकिन गोपाल नहीं माने और बोले, "बुआ जी, आप पहले भोजन कर लें। अंत में अपनी

थाली में हर व्यंजन थोड़ा-थोड़ा प्रसाद रूप में मेरे लिए छोड़ दें। मैं उसी को ग्रहण करूंगा।"

बुआ जी ने अब तक अपनी थाली का जूठा पदार्थ किसी को नहीं खिलाया था। लेकिन गोपाल जैसे नटखट व्यक्ति के आगे उनकी एक न चली। आखिर उन्हें पहले भोजन करना ही पड़ा। बाद में उसी थाली में गोपाल खाने बैठे। भोजन की थाली में अन्य खाद्य पदार्थों के अलावा एक कटोरी में घीया का रायता भी था। गोपाल ने बुआ जी की नजर बचाकर धोती के फेंटे से चिंगड़ी मछली निकाल, उस रायते में मिला दी। दूसरी सब्जी-भाजियों के साथ बीच-बीच में एकाध बार वह रायता भी खा लेते।

तभी दरवाजे के पास बैठीं बुआ जी ने गोपाल से पूछा, "और क्या चाहिए गोपाल? निरामिष भोजन निश्चय तुम्हें अच्छा नहीं लगा होगा।"



"अच्छा क्यों नहीं लगेगा बुआ जी! सब कुछ स्वादिष्ट बना है। फिर चिंगड़ी मछली मिला चीये के रायते का तो पूछना ही क्या? अपूर्व स्वादिष्ट बना है। ऐसा रायता जीवन में आज तक नहीं खाया। जी करता है रायते के साथ कटोरी ही निगल जाऊं।"

यह सुन कर बुआ जी अवाक् रह गईं। क्षणभर बाद विस्मित स्वर में बोलीं, "क्या कहते हो गोपाल! वह तो शुद्ध चीया का रायता है।"

झिझक का भाव दिखाते हुए गोपाल ने बुआ जी को रायते की कटोरी में से चिंगड़ी मछली निकालकर दिखाते हुए कहा, "यह देखिए बुआ जी! कितनी ढेर सारी चिंगड़ी मछली है। इसीलिए रायता भी लाजवाब बना है। मजा आ गया खाने का।"

बुआ जी को काटो तो खून नहीं। रायते की कटोरी में चिंगड़ी मछली देखकर उनके होश-हवास गुम हो गए। अब इनकार करना बेकार था। दबी जबान में वह बोलीं, "वृद्ध शरीर, दिमाग ठीक से काम करता नहीं। क्या करना था और क्या हो गया! लेकिन इस बात की चर्चा किसी से न करना गोपाल।"

"बुआ जी, छह महीने बाद ही तो मरने वाला हूं। फिर इस चलती-चलाती बेला में आप मुझसे झूठ बोलने को क्यों कह रही हैं? आप तो जानती ही हैं, राजा साहब हमारे अन्नदाता हैं। यदि उन्होंने पूछा कि बुआ जी ने क्या-क्या खिलाया तो मुझे विवश होकर सच बात कहनी ही पड़ेगी। एक उपाय है बुआ जी। यदि आप चाहें तो रुपए देकर मेरी जबान खरीद सकती हैं। छह महीने बाद जब मुझे मरना ही है तो आपके अनुरोध पर यह छह माह मैं अपनी जबान बन्द रखूंगा। वैसे तो आपको बिना मांगे ही कुछ रुपए देने चाहिए, जिससे कि मैं यह बात किसी से न कहूं। आपको तो पता है मैं ठहरा भांड़ और भंड़ैती पर ही हमारे परिवार का भरण-पोषण निर्भर है। यदि छह माह तक जबान बन्द रही तो फिर मेरी तो आय का साधन ही बन्द हो जाएगा। इसीलिए मैंने कहा कि यदि आप बस पांचेक हजार रुपए दे दें तो मैं अपना मुंह बन्द रख सकता हूं।"

"पांच हजार! ओ रे बाबा! इतने ऊंचे मत पहुंच, गोपाल! नहीं तो तुझसे पहले मैं ही मर जाऊंगी। मैं इतने रुपये कहां से लाऊं? अभी मेरे पास साढ़े तीन सौ रुपये हैं, तुम उन्हें ले जाओ।" और रुपया लाकर गोपाल के हाथ पर रखती हुई बुआ जी बोलीं, "अब तुम अपनी जबान हमेशा के लिए बन्द रखना।" गोपाल ने रुपये फेंटे में रखते हुए कहा, "सो तो बन्द रखनी ही पड़ेगी बुआ जी लेकिन आपने रुपये बहुत कम दिये। खैर, कोई बात नहीं। आप अपनी हैं तो मानना ही पड़ेगा पर एक बात का ख्याल आप जरूर रखिएगा। मेरे मरने के बाद मेरे बाल-बच्चों को कोई कष्ट नहीं होने पाए, नहीं तो वे सब बरबाद हो जाएंगे।" "अब तो ख्याल रखना ही पड़ेगा, नहीं तो अपनी फजीहत कौन कराना चाहेगा,"

बुआ जी धीमे स्वर में बोलीं।

गोपाल रुपये लेकर महाराज के पास आए। उन्हें देखते ही महाराज बोले, ''आओ गोपाल, तुम्हारे इनाम के सात सौ रुपये कब से तुम्हारा इन्तजार कर रहे हैं। मैंने बुआ जी के घर के पास अपना एक आदमी भेदिये के रूप में बिठा दिया था। उसने आकर मुझे सब कुछ बता दिया है। तुम्हें अब बोलने की जरूरत नहीं। मान गये गोपाल, तुम्हारी कोई बराबरी नहीं। इतनी कंजूस बुआ जी से इतने रुपए ले लेना कोई साधारण बात नहीं है। लेकिन लिये तुमने उन्हें काफी दुख देकर। मुझे तो डर है, कहीं रुपयों के शोक में बुआ जी मर न जाएं?''

''वह मरेंगी नहीं हुजूर!'' गोपाल ने हंसकर जवाब दिया, ''इसी डर से तो मैंने अधिक रुपये के लिए उन पर दबाव नहीं डाला।''

अंधा नहीं होता तो क्या ऐसी बीवी घर लाता



एक दिन संध्या समय अपने घर के भीतर प्रवेश करते हुए गोपाल गिर पड़े। शायद किसी बच्चे ने दरवाजे पर ही पानी गिरा दिया था, जिस हो गया था। उस समय गोपाल की पत्नी रसोईघर में खाना पका रही थी।

गिरने से चोट लगी और गोपाल भांड़ अपनी स्त्री को लक्ष्य कर साहिबा, ऐसे कौन-से जरूरी काम में व्यस्त हो? घर के बच्चे दरवाजे पर हैं उसे देखकर साफ भी नहीं करती। पांव फिसलने से गिर पड़ा हूं

गोपाल की बात सुनकर रसोईघर के भीतर से पत्नी चिल्लाव तो नहीं हो? दरवाजे पर पानी-वानी गिरा है तो देख नहीं सक

गोपाल भांड़ चोट लगने के कारण दर्द से परेशान तो का काम किया। वह चीख कर बोले, ''अरे, अंधा जैसी काली-कलूटी स्त्री को बीवी बनाकर घर ला

गोपाल की इस बात के बाद रसोईघर बरतनों की खनखनाहट अवश्य सुनाई

सबसे बड़ा मनहूस कौन?

महाराजा कृष्णचन्द्र को मनहूस सूरतवाला व्यक्ति बिलकुल पसन्द नहीं था। एक दिन राजमहल में भव्य समारोह का आयोजन किया गया। नाच-गाने आदि तमाशे का कार्यक्रम काफी रात तक चलता रहा। इसलिए गोपाल भांड़ अपने घर न जा सके। बाकी रात उन्हें राजमहल के अतिथि-कक्ष में बितानी पड़ी।

दूसरे दिन भोर के समय महाराजा कृष्णचन्द्र उठ कर सैर के लिये निकले और घूमते-घूमते आकर अतिथि-कक्ष के बरामदे में खड़े हो गए। संयोग से उस समय तक गोपाल भांड़ भी जग गए थे। उनकी नज़र बरामदे में खड़े महाराज पर पड़ी। उन्होंने सामने आकर महाराज को प्रणाम किया।

उसी दिन सूरज निकलने के बाद राजमहल का नाई महाराज की हजामत बनाने के लिए आया। हजामत के बाद जब वह महाराज के बढ़े हुए नाखून काटने लगा तो अचानक उनके
"हैं। यदि उन्हें उंगली थोड़ी कट गई। पहले तो नाई घबराया और दण्ड मिलने के डर
कहनी ही पड़ेगी लेकिन कुछ क्षण बाद वह सम्भलकर बोला, "हुजूर, आज कितने वर्ष बीत
सकती हैं। छह त बनाते, लेकिन आज तक कहीं कुछ नहीं हुआ था। लगता है आज
अपनी जबान बन्द मनहूस सूरत को देखा है।"
मैं यह बात किसी नकर महाराजा कृष्णचन्द्र ध्यान से सोचने लगे। कुछ क्षण बाद उन्हें याद
परिवार का भरण तिथि-कक्ष में सबसे पहले उन्होंने गोपाल भांड़ की सूरत देखी थी।
का साधन ही बन्द तुरन्त बुलाया गया। उसके आने पर महाराज बोले, "तुम जैसी मनहूस
दें तो मैं अपना मुंह जीवित रहने से न जाने कितनों का अनिष्ट होगा। आज उठते ही मैंने
"पांच हजार! ओमेरी उंगली कट गई। इसलिये तुम्हें मृत्यु-दण्ड दिया जाता है।"
मर जाऊंगी। मैं इतने रुप नकर गोपाल भांड़ तनिक भी विचलित नहीं हुए। वह गंभीर और
ले जाओ।" और रुपया ला कितनी विचित्र बात है। सवेरे उठने पर आपने मेरा मुंह देखा
अपनी जबान हमेशा के लिए बई। लेकिन मैंने जागने पर सबसे पहले आपकी सूरत देखी
तो बन्द रखनी ही पड़ेगी बुआ जी आप ही बताइए, ज्यादा बड़ा मनहूस कौन हुआ?"
नहीं। आप अपनी हैं तो मानना ही पड़ेगा त्यु-दण्ड का आदेश वापस लेते हुए कहा, "देखो
मरने के बाद मेरे बाल-बच्चों को कोई कष्ट नहीं हुआ।" और वह खिलखिलाकर जोर से
जाएंगे।" "अब तो ख्याल रखना ही पड़ेगा, नहीं ०.



जैसा गुरु वैसा चेला

गोपाल भांड़ को महाराजा कृष्णचन्द्र के दरबार में आए कुछ समय हो गया था, लेकिन उनके घर की माली हालत अभी भी सुधरी नहीं थी। इसका कारण था कि अभी तक उन पर महाराज की विशेष कृपा नहीं हुई थी।

उसी समय की बात है एक दिन गोपाल भांड़ ने राजमहल के राजगुरु से कहा, "गुरुदेव, आप जब अपने किसी शिष्य के घर जाएं तो मुझे भी अपने साथ ले लिया करें। मैं हमेशा साथ रहने वाले शिष्य की तरह आपकी सेवा-टहल करूंगा।"

गुरुदेव ने गोपाल की बात मान ली और कुछ दिनों बाद जब अपने एक शिष्य के घर जाने लगे तो गोपाल भांड़ को अपने साथ ले लिया। गुरुदेव के आगमन पर उस शिष्य ने अपनी सामर्थ्य भर उनका आदर-सत्कार किया।

घर से बाहर जाने पर गुरुदेव किसी के हाथ का बना भोजन नहीं खाते थे। वह बहुत साफ-सफाई से अपना भोजन स्वयं पकाते थे। उस शिष्य के घर भी उन्होंने अपना भोजन खुद तैयार किया और उसे दो पत्तलों पर निकालकर पास के पोखर में स्नान करने चले गए।

उनके जाने के बाद गोपाल ने देखा कि गुरुदेव की पत्तल पर ढेर सारे चावल के साथ मछली के अनेक बड़े-बड़े टुकड़े रखे हुए हैं और उनकी पत्तल पर सिर्फ एक टुकड़ा मछली तथा पोई का साग रखा है। भात भी थोड़ा-सा ही है। वह गुरुदेव के न्याय पर मन ही मन मुस्कराये और उनके आने की प्रतीक्षा करने लगे।

कुछ देर बाद जब पोखर से स्नान कर गुरुदेव आ गए तो गोपाल ने बारी-बारी से दोनों पत्तलों को छूते हुए कहा, "गुरुदेव, आप इस पत्तल पर बैठेंगे या उस पत्तल पर?"

"सवा सत्यानाश!" गुरुदेव बड़बड़ाए।

गोपाल भांड़ द्वारा दोनों पत्तल छू देने से उस समय उन्हें भूखा ही रहना पड़ा और वह बड़बड़ाते हुए सिर्फ दूध पीकर सो गए।

बाद में गुरुदेव ने महसूस किया, "हमेशा साथ रहकर सेवा-टहल करनेवाला शिष्य भी कुछ कम सयाना नहीं है। आखिर वह गुरु के सारे कष्टों को अपने ऊपर झेलता है इसलिए उसके साथ समान व्यवहार करना चाहिये नहीं तो ऐसी गड़बड़ी होती ही रहेगी।"



गोपाल का संदेश-भक्षण

एक बार गोपाल भांड़ एक गांव के रास्ते से कहीं जा रहे थे। घर से सुबह-सुबह निकले थे। चलते-चलते दोपहर हो गई। फिर भी मंजिल अभी काफी दूर थी। भोजन का समय हो जाने से भूख जोर से सताने लगी। खाली पेट चलना कठिन हो रहा था। संयोग की बात उस समय उनकी जेब भी खाली थी। इसलिये कहीं से कुछ खरीद कर भी खा नहीं सकते थे। उस इलाके में वह एकदम नये थे। इसलिए कहीं से कुछ उधार मिलने की भी उम्मीद नहीं थी। मन ही मन सोच रहे थे, यदि इस समय कोई उधार दे दे तो उसे वह बाद में आकर निश्चय ही लौटा देंगे।

सोचते-सोचते वह कुछ और आगे बढ़े। सामने एक वटवृक्ष के नीचे हलवाई की एक छोटी-सी दुकान दिखाई दी। दुकान में खाने-पीने के नाम पर पूरी-कचौरी जैसी कोई वस्तु न थी। सिर्फ एक थाल में ताजे बने संदेश सजे हुए थे। भूख के मारे उनकी जान निकली जा रही थी। थाल में रखे संदेश देखकर वह अपना लोभ दबा न सके और दुकान के भीतर घुस गए।

उस समय दुकान में एक छोटा-सा लड़का बैठा हुआ था। आसपास और कोई नहीं था।

उन्होंने उस लड़के से पूछा, "मुन्ना, तुम्हारे बाबा कहां हैं?"

लड़के ने जवाब दिया, "दुकान के पीछे ही हमारा घर है। बाबा इस समय खाना खा रहे हैं।"

गोपाल भांड़ ने उस लड़के से फिर कोई बात नहीं की और संदेश का थाल हाथ में लेकर खाने लगे। दो-चार संदेश पेट में जाने के बाद वह लड़के से बोले, "मेरा नाम मक्खी है। मैं रोज ही यहां से संदेश खाकर जाता हूं। विश्वास न हो तो जाकर अपने बाबा से पूछ आओ।" और वह फिर से खाने में जुट गए।

लड़का दुकान में ही बैठे-बैठे ऊंची आवाज में बोला, "ओ बाबा! मक्खी संदेश खा रही है।"

लड़के के पिता ने खाना खाते-खाते ही जवाब दिया, "खाती है तो खाने दे! वह तो रोज ही खाती है।"

पिता का जवाब सुनकर लड़का चुप हो गया। गोपाल भांड़ ने संदेश का पूरा थाल सफाचट कर अपनी राह पकड़ी। लड़के के पिता ने खाना खाने के बाद कुछ आराम किया। उसके बाद जब वह दुकान में आया तो देखा थाल में एक भी संदेश नहीं है। उसने लड़के से पूछा, "थाल संदेश से भरा हुआ था, सब कहां गया?"



लड़के ने जवाब दिया, ''मक्खी ने खा लिया। मैंने उस समय तुमसे पूछा भी था। तुमने ही कहा था वह तो रोज ही खाती है, खाने दे।''

''अरे, यह कैसी मक्खी थी?'' पिता अचरज भरे स्वर में बोले।

''पंखे से उड़ाई जानेवाली मक्खी नहीं थी। वह एक मोटी मक्खी थी—यानी मनुष्य मक्खी।''

लड़के की बात सुनकर दुकानदार दोनों हाथों से अपना सिर पीट-पीट कर हाय-हाय करने लगा। बार-बार उसके मुख से यही निकलता, "उतना सारा थाल भर संदेश कौन खा गया रे!"

दूसरे दिन गोपाल भांड़ उसी रास्ते से वापस लौटे। उस वक्त भी वही लड़का दुकान पर था। गोपाल भांड़ उससे बोले, "ओ लड़के! अपने बाबा को बोल, कल वाली मक्खी फिर आई है।"

लड़के ने पिता को तुरन्त आवाज दी, "ओ बाबा! कल वाली मक्खी आई है।"

सुनते ही दुकानदार भागा-भागा आया और हाथ जोड़कर गोपाल भांड़ से बोला, "बाबू जी, मैंने आपका क्या बिगाड़ा था कि आपने मुझ गरीब का इतना नुकसान कर डाला?"

गोपाल भांड़ हंसकर बोले, "मुझे जानते हो! मेरा नाम गोपाल भांड़ है। कल मुझे बहुत भूख लगी थी और मेरी जेब खाली थी। इसीलिए मैंने बहाना बनाकर तुम्हारे संदेश से अपना पेट भरा। आज आया हूं तुम्हारा पैसा चुकाने। बोलो, कितने का संदेश था?"

गोपाल भांड़ का नाम सुनते ही दुकानदार सहम गया। वह पुनः हाथ जोड़कर बोला, "हुजूर यदि कल ही बतला देते तो कम से कम खिदमत का अवसर मिल गया होता। फिर भी कोई बात नहीं। आपका दर्शन मिला, मेरा पैसा वसूल हो गया। अब मन में कोई पछतावा नहीं।"

"नहीं भाई! तुम एक गरीब आदमी हो और किसी गरीब का दिल दुखाना गोपाल भांड़ ने नहीं सीखा। यह लो अपने संदेश की कीमत।"

और दुकानदार के ना-ना करने पर भी उन्होंने दस रुपए गल्ले की पेटी पर रख दिए।

राजवैद्य का चुनाव

कृष्णनगर राज परिवार के लिए एक सुयोग्य राजवैद्य की आवश्यकता थी। इसके लिए उन्होंने अपने राज्य भर में डौंड़ी पिटवा दी। खबर मिलते ही दूर-दूर से अनेक वैद्य अपना भाग्य आजमाने के लिए निश्चित समय पर राजसभा में उपस्थित हुए। सभा में सभी वैद्यों ने अपने-अपने गुणों की खूब बढ़ा-चढ़ाकर प्रशंसा की।



इसी समय सभा में गोपाल भांड़ भी आ पहुंचे। उन्हें देखते ही महाराजा कृष्णचन्द्र बोले, "गोपाल, इस समय हमारे दरबार में दूर-दूर से आए अनेक वैद्य उपस्थित हैं। इनमें से किसी एक का राजवैद्य के पद के लिए चुनाव करना है और यह काम मैं तुम्हारे सिपुर्द करता हूं।"

"यह काम तो बड़ा आसान है महाराज! मैं अभी राजवैद्य का चुनाव किए देता हूं।"

फिर गोपाल भांड़ उपस्थित वैद्यों की ओर देखकर बोले, "आप सबने अपने-अपने गुणों का बखान किया, महाराज और राजसभा के सभी गणमान्य सभासदों ने ध्यान से सुना। लेकिन राजवैद्य का पद अपने आप में महत्वपूर्ण स्थान है। जिस वैद्य ने अपने वैद्यक जीवन में कम से कम एक हजार रोगियों की हत्या नहीं की वह राजवैद्य होने के लायक नहीं।"

गोपाल भांड़ की बात सुनकर एक वैद्य ने जवाब दिया, "मैंने अपने जीवन में अब तक करीब दस हजार रोगियों का इलाज किया। उनमें से दो हजार रोगी मर गए।"

दूसरे वैद्य ने कहा, "मैंने आज तक लगभग तीस हजार मरीजों का इलाज किया। उनमें से चार हजार मरीज अपने प्राणों से हाथ धो बैठे।"

तीसरा बोला, "मेरे दो हजार रोगियों में से एक हजार मृत्यु को प्राप्त हुए।"

एक और वैद्य ने कहा, "मैंने अब तक सिर्फ तीन रोगी देखे और तीनों ही मर गए।"

इस प्रकार सभी उपस्थित वैद्यों ने अपने-अपने मरीजों के मरने-जीने का पूरा विवरण दे दिया। अन्त में एक वैद्य ऐसा भी था, जो राजसभा से उठकर बिना कुछ बोले ही चुपचाप जाने लगा। उसे गुमसुम जाते देख गोपाल ने आवाज दी, "सुनिए वैद्यराज! आप बिना कुछ कहे ही वापस जा रहे हैं? क्या बात है? क्या आपको राजवैद्य बनना स्वीकार नहीं?"

"स्वीकार क्यों नहीं?" उस वैद्य ने जवाब दिया, "यदि इस पद की इच्छा नहीं होती तो इतनी दूर से चलकर आता ही क्यों? लेकिन वह मेरे भाग्य में कहां? क्योंकि मैंने अपने जीवन में आज तक करीब पैंतीस हजार रोगियों का इलाज किया। उनमें से मात्र पांच रोगी ही मरे। लेकिन यहां मरने वाले रोगियों की संख्या कम से कम एक हजार होनी चाहिए। एक हजार रोगियों को मारने में तो शायद मेरा सारा जीवन ही लग जाये, तो भी शायद संख्या पूरी नहीं होगी! यही सोचकर यहां से जा रहा हूं।"



उसकी बात सुनने के बाद गोपाल भांड़ ने धीरे से महाराज के कान में कहा, "हुजूर, यही व्यक्ति राजवैद्य बनने के लिए उपयुक्त है। बाकी सब वैद्य बेकार हैं।"

गोपाल भांड़ की इस सूझबूझ की महाराज और सारे दरबारियों ने प्रशंसा की तथा उस वापस जाते वैद्य को रोककर राजवैद्य पद के लिये चुने जाने की घोषणा कर दी।

षट्रंग पुराण-प्रसंग

कृष्णनगर राज्य की सीमा से लगे बेगमपुर में नवाबी हुकूमत थी। एक बार नवाब के मन में यह जानने की सनक सवार हुई कि जमीन के नीचे क्या है। नवाब ने लोगों से सुन रखा था कि ज्योतिष-विद्या का अच्छा जानकार पण्डित गणना करके यह बतला सकता है कि जमीन के नीचे क्या है? पण्डित सही बोल रहा है या गलत उसके बताने के साथ-साथ ही कुछ मिट्टी खोदने के बाद इस का पता तुरन्त चल जाएगा।

नवाब ने यह शर्त भी रखी कि पण्डितों के ठीक-ठीक बतला देने पर उन्हें एक हजार अशरफी इनाम के बतौर दी जाएगी और नहीं बताने पर जेल काटनी पड़ेगी।

नवाब की इस घोषणा को सुनकर दूर-दूर से अनेक पण्डित इनाम पाने के लोभ में उनके दरबार में पहुंचे। सभी ने अपनी-अपनी किस्मत आजमायी। लेकिन किसी के भी उत्तर से नवाब को संतुष्टि नहीं हुई। फलस्वरूप सबको कारावास में डलवा दिया गया।

नवाब की घोषणा की खबर महाराजा कृष्णचन्द्र के कानों तक पहुंची। उन्होंने भी कुछ योग्य पण्डितों को नवाब के दरबार में भेजा। लेकिन महाराज के भेजे हुए पण्डित भी नवाब के जेलखाने की हवा खाने लगे। जब उनकी दुर्दशा की खबर महाराज को मिली तो उन्हें बड़ा दुख हुआ। उन्होंने बहुत सोचा, लेकिन सनकी नवाब की कैद से उन पण्डितों की मुक्ति का कोई उपाय नजर नहीं आया। कई दिनों से वह दरबार में आते और उदास मन गुमसुम वापस राजमहल में चले जाते।

गोपाल को महाराज की इस चिन्ता का बिलकुल पता न था। वह महाराज का उतरा हुआ चेहरा देखते, लेकिन कुछ कारण समझ में नहीं आता। आखिर जब उनसे महाराज की दशा देखी न गई तो उन्होंने एक दिन पूछ ही लिया, "महाराज, गुस्ताखी माफ हो! कई दिन से देख रहा हूं आप उदास मन से दरबार में आते हैं और कुछ देर बाद ही गुमसुम चले जाते



हैं। यह एकाएक आपको क्या हो गया? कुछ कहें तो सही।"

महाराज ने एक-एक कर सारी बात गोपाल को सुनाते हुए कहा, "बेचारे निर्दोष पण्डितों का कष्ट मुझसे देखा नहीं जा रहा है। लेकिन कोई सूरत नजर नहीं आ रही कि उन्हें नवाब की कैद से कैसे छुड़ाया जाये।"

सुनकर गोपाल भांड़ बोले, "महाराज, इस छोटी-सी बात के लिए इतनी चिन्ता क्यों? मैं आज ही उन सभी पण्डितों को छुड़ाकर अपने साथ ले आता हूं। आप नवाब के पास सिर्फ यह संदेश भिजवा दें कि एक महान ज्योतिषी उनके यहां आ रहा है। वह एक त्रिकालदर्शी पण्डित है, जो यह बता सकता है कि जमीन के नीचे क्या है।"

"तो क्या तुम ज्योतिष गणना भी जानते हो?" महाराज ने विस्मित स्वर में पूछा।

"मैं क्या जानता हूं और क्या नहीं, यह अभी नहीं बताऊंगा। परन्तु इतना जरूर जानता हूं कि मैं खुद तो नवाब के जाल से निकल ही आऊंगा, साथ ही आपके सम्मान की रक्षा करते हुए उनकी कैद से उन हजारों पण्डितों को भी छुड़ा लाऊंगा," गोपाल ने जवाब दिया।

उस समय दरबार में अपने आसन पर महाराज का मंत्री भी विराजमान था। गोपाल भांड़ की बात सुनकर वह बोला, "यह असम्भव है, गोपाल! तुम नवाब को जानते नहीं। वह बहुत ही धूर्त और चालाक व्यक्ति है। उसके जाल से आज तक कोई नहीं बच सका।"

"मंत्री जी, हो सकता है नवाब धूर्त और चालाक हो। लेकिन आपने गोपाल को अभी तक नहीं जाना। मैं भांड़ हूं, भांड़। गिरगिट भी रंग बदलने में मुझसे मात खाता है। फिर वह नवाब का बच्चा किस खेत की मूली है। आप लोग मुझ पर भरोसा करें। नवाब कितना बड़ा बेवकूफ है, यह गोपाल भांड़ को अच्छी तरह मालूम है। मैं यह काम सहज ही पूरा कर सकुशल वापस आ जाऊंगा।"

यह कह कर गोपाल भांड़ जब दरबार से उठकर जाने लगे तो महाराज ने कहा, "गोपाल, यदि सचमुच तुम इन निर्दोष पण्डितों को मुक्त करा दो तो मैं तुम्हें एक हजार रुपया इनाम दूंगा।"

"तो महाराज, यह समझिए कि वे सभी पण्डित आ गए। आप मेरा इनाम तैयार रखिए। मैं अभी आता हूं।"

राज दरबार से उठकर गोपाल भांड़ सीधे अपने घर आए। उन्होंने चारपाई के एक टूटे हुए पाये को कीमती रेशमी वस्त्र की चौदह परतों में लपेट लिया। सिर पर सिल्क का साफा, बदन में रेशमी मिरज़ई और मलमल की दूध-सी धुली धोती, कंधे पर रामनामी शाल और ललाट पर चंदन का लंबा टीका उनके पहुंचे हुए विद्वान होने का संकेत कर रहा था। लाल कपड़े में लिपटीं कुछ पोथियां बगल में दबा और हाथ में रेशमी वस्त्र में लिपटा पाया लिए



हुए वह नवाब के दरबार में उपस्थित हो गये।

झुक कर नवाब को सलाम करते हुए बोले, "मुझे महाराजा कृष्णचन्द्र ने आपके दरबार में भेजा है। मैं आपको सहज ही बता सकता हूं कि जमीन के नीचे क्या है।"

गोपाल के पहुंचने के साथ ही उनकी वेशभूषा देखकर नवाब पहले ही उनसे बड़ा प्रभावित हुआ। ऊपर से उनकी चिकनी-चुपड़ी बातों से उसके मन को बड़ा संतोष मिला। वह प्रफुल्लित मन से बोला, "आपका चेहरा देखते ही मैं समझ गया कि निश्चय ही आप एक महान पण्डित हैं। आप निस्संदेह सब कुछ बतला सकते हैं। लेकिन अभी आप दूर से आ रहे हैं। थक गये होंगे इसलिए पहले आसन ग्रहण कीजिए। कुछ विश्राम कर लेने के बाद फिर बताइये कि जमीन के नीचे क्या है?"

गोपाल भांड़ नवाब द्वारा निर्देशित आसन पर इतमीनान से बैठ गए। फिर रेशमी वस्त्र की चौदह परतों में लिपटे पाए से तीन परत खोलकर पहुंचे हुए ज्योतिषियों की तरह गणना करने लगे। अनेक क्षण तक उंगलियों पर गिनते रहने के बाद नवाब से बोले, "हुजूरे आला—

'सर्वं सारं षट्रंग पुराणम्।
हिन्दू पंडितं न शक्य भूतलंगमनम्।।'

"पण्डित महाशय, इस श्लोक का क्या अर्थ है जरा खोलकर बताएं?" नवाब ने पूछा।

गोपाल ने मुस्कराकर जवाब दिया, "हुजूर, अष्टादश पुराणों का सार है षट्रंग पुराण। इसकी गणना करके मैंने देखा। यह कहता है—जमीन के नीचे क्या है, इसकी गणना कर कोई हिन्दू पण्डित नहीं बता सकता।"

"तब इसको कौन बता सकता है, पण्डित महाशय," नवाब ने प्रश्न किया।

"आपका प्रश्न उचित है हुजूर!" गोपाल ने हंसकर कहा, "इस षट्रंग पुराण में इस प्रश्न का भी समाधान दिया हुआ है। मैं अभी बताता हूं गणना करके।"

कहते हुए गोपाल ने पाए के ऊपर से तीन परत रेशमी वस्त्र और खोल दिया। फिर पहले के समान अपनी उंगलियों पर गणना करने का सा भाव प्रदर्शित करते हुए बोला, "हुजूर, मेरा षट्रंग पुराण कहता है—

'यवनं वा म्लेच्छं भूतलां गणनां शक्यम्।
हिन्दू पण्डितं पृथ्वीं वा तदुर्ध्वम्।।'

अर्थात यवन या म्लेच्छ जन मरने के बाद जमीन के नीचे कब्र में स्थान पाते हैं, इसलिए

यवन या म्लेच्छ मौलवी या मुल्ला आसानी से बता सकते हैं कि जमीन के नीचे क्या है। हिन्दू पण्डित इस बात को इसलिए नहीं बता सकता, क्योंकि मरने के बाद उसका दाह-संस्कार किया जाता है और उसकी आत्मा ऊपर जाकर अन्तरिक्ष में विलीन हो जाती है। इसलिए ऊपर आकाश में क्या है वह सहज ही बता सकता है। लेकिन आपका सवाल है जमीन के नीचे क्या है? यह आप किसी यवन या म्लेच्छ पण्डित से पूछिए।''

गोपाल का युक्तिसंगत ज्योतिष और शास्त्र-वचन नवाब के कण्ठ के नीचे अच्छी तरह उतर गया। नवाब गोपाल के तर्कपूर्ण उत्तर से संतुष्ट हुआ और उन्होंने तुरन्त हजारों हिन्दू पण्डितों को मुक्त कर प्रत्येक को एक-एक सौ रुपया इनाम देकर विदा कर दिया।

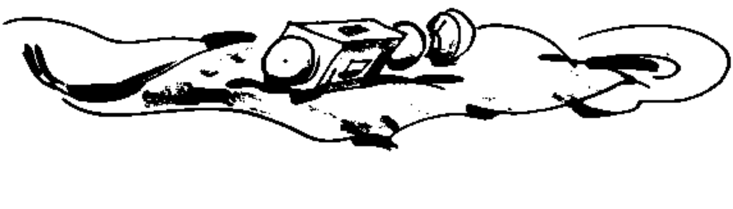
फिर गोपाल के हाथों पर पुरस्कार स्वरूप पांच सौ रुपए रखते हुए नवाब ने कहा, ''पण्डित महाशय, आपने सच बात बताकर इन हजारों बेगुनाह पण्डितों की जान बचा ली। नहीं तो जाने इन्हें कितना कष्ट झेलना पड़ता। अब आप हमें आशीर्वाद दें और अपने घर जाएं। मैं अभी मुल्ला-मौलवियों को बुलवाकर उनसे पूछता हूं कि जमीन के नीचे क्या है।''

नवाब से पांच सौ रुपए इनाम में लेकर गोपाल भांड़ खुशी-खुशी आकर महाराज कृष्णचन्द्र के दरबार में उपस्थित हुए। जेलखाने से मुक्त वे हजारों पण्डित भी उनके साथ ही महाराज के दरबार में आए। गोपाल भांड़ के मुख से पूरी कहानी विस्तारपूर्वक सुनकर सारे दरबारी एक स्वर में जयघोष कर उठे—

''जय गोपाल—जय षट्रंग पुराण।''

महाराजा कृष्णचन्द्र ने अपने वचन के अनुसार एक हजार रुपया गोपाल भांड़ को इनाम दिया और पूछा, ''अच्छा गोपाल! जरा अपने षट्रंग पुराण का दर्शन हमारे सभासदों को भी तो करा दो।''

गोपाल भांड़ ने पुरस्कार के रुपए शाल के कोने में बांधते हुए षट्रंग पुराण के ऊपर से रेशमी कपड़े की चौदह परतें हटा दीं। कपड़े से अलग होते ही चारपाई का टूटा पाया भरे दरबार में सबके सामने जमीन पर गिर पड़ा। उसे देखते ही महाराजा कृष्णचन्द्र और सारे सभासद अट्टहास कर उठे।





हुजूर ही तो मेरे मां-बाप हैं

गोपाल भांड़ किसी को जवाब देने से कभी चूकते नहीं थे। किसको कब-क्या कह रहे हैं, उसका ध्यान वह बिलकुल नहीं रखते थे। उनका जवाब भी माप-तोलकर नहीं निकलता था। मन में जो आया तुरन्त बोल देते थे।

एक बार किसी बात पर क्रोधित होकर महाराजा कृष्णचन्द्र ने गोपाल भांड़ के मन को आघात पहुंचाने की इच्छा से कहा, ''ओ सूअर के बच्चे।''

महाराज की बात से गोपाल भांड़ तनिक भी विचलित नहीं हुए। हंसकर बोले, ''हुजूर, आप ही तो हमारे मां-बाप हैं। फिर विचार कीजिए, औलाद तो वैसी ही होगी, जैसे मां-बाप होंगे। मैं समझता हूं, ऐसी बात आप फिर कभी नहीं कहेंगे!''

गोपाल की इस चतुराईपूर्ण बात पर महाराज मुस्कराकर बोले, ''पाजी कहीं का! किसी को भी नहीं बख्शता है।''

गोदाम दोबारा कब जलेगा

एक बार किसी कारण से एक गोदाम में अचानक आग लग गई। उसमें हजारों रुपए के आलू भरे पड़े थे। उस गोदाम का मालिक अपना माल जलता देख अपना सिर पीटता एक तरफ खड़ा था। पास-पड़ोस के लोग आग बुझाने का प्रयत्न कर रहे थे।

संयोग से उसी समय उस रास्ते से गोपाल भांड़ आ निकले। वह किसी काम से कहीं जा रहे थे। सामने गोदाम जलता देखकर वह वहां रुक गए और पास के ही एक मोदी की दुकान से नमक मांगकर गोदाम के अधजले आलू बड़े स्वाद से खाने लगे। वहां उन्होंने इतने आलू खाए कि उनका पेट भर गया। फिर पेट पर हाथ फेरते हुए उन्होंने एक डकार ली और उस मोदी से ही एक लोटा जल मांग कर पिया। इसके बाद एक किनारे गोदाम के मालिक को सिर थामकर बैठे देखा तो उसके पास जाकर बोले, ''क्यों दादा! सिर पकड़कर क्यों बैठे हो? यह क्या इस तरह मुंह लटकाकर बैठने का समय है?''



गोदाम का मालिक चिढ़कर बोला, "जिसका जाता है, वही जानता है। मुझे क्या करना चाहिए और क्या नहीं इसे तुम्हारे जैसे पेटू नहीं समझेंगे। जाओ, पेट भरने से कोई कोना खाली रहा हो तो पचीस-पचास आलू और खा लो और अपना रास्ता नापो।"

गोपाल भांड़ समझ गए कि गोदाम के मालिक को उनका आलू खाना बिलकुल अच्छा नहीं लगा है। वह गोदाम के मालिक के निकट आकर बोले, "अच्छा तब तो ठीक-ठीक खबर आप ही दे सकते हैं।"

"कैसी खबर?" गोदाम के मालिक ने झल्लाकर पूछा।

"यही कि इस बार का कोटा तो पूरा कर लिया है, अब गोदाम में दोबारा आग कब लगेगी, जिससे फिर आलू खाने आऊं।" गोपाल भांड़ ने हंसकर कहा और अपने रास्ते पर आगे बढ़ गए।

संदेश का ज्वर

एक बार गोपाल भांड़ अपने एक दोस्त के साथ नाव से बेगमपुर जा रहे थे। नाव में मल्लाह के अलावा दो यात्री और भी थे। उन दोनों यात्रियों में से एक के हाथ में संदेश की हांडी थी। नाव के आधे से कुछ कम भाग में मल्लाह ने चारों ओर चटाई लगा कर एक छोटी कोठरी-सी बना रखी थी। बंगाल में उसे गलुई कहते हैं। उस गलुई के भीतर घुप अंधेरा था और बहुत गरमी भी थी। बाहर बड़ी ही सुहावनी हवा चल रही थी। संदेश वाले यात्री ने अपने साथी से कहा, "लगनसार बाजार में संदेश का भाव बहुत तेज़ है। फिर भी फेलू, हलवाई की दुकान से कड़े पाक का बना दो सेर संदेश मैंने ले ही लिया।"

संदेश वाले यात्री का साथी बोला, "फेलू की दुकान का संदेश दूर-दूर तक मशहूर है। वहां मिठाइयों का मोल ज्यादा तो देना पड़ता है, लेकिन माल अच्छा मिलता है। अब ऐसा करो, अभी बहुत दूर जाना है, इस हांडी को इस तरह हाथ में कब तक लिए रहोगे? इसे गलुई के भीतर रख, बाहर आकर आराम से हवा में बैठो। नाव से उतरते समय हांडी ले लेंगे।"

अपने साथी की सलाह मानकर वह यात्री संदेश की हांडी गलुई में रख आया और बाहर आकर हवा में बैठ गया और वे दोनों आपस में बातचीत करने लगे।



गोपाल भांड़ और उनका साथी नीपू चाचा नाव में बाहर बैठे उन दोनों यात्रियों की बातें सुनते रहे। इतने में ही कुछ देर बाद गोपाल भांड़ कांपते-कांपते अपने साथी से बोले, "अरे चाचा! मुझे तो जोर का ज्वर चढ़ आया है। कुछ-कुछ ठण्ड भी लग रही है।"

नीपू चाचा ने गोपाल भांड़ के बदन का स्पर्श करते हुए कहा, "सच, तुम्हें तो बहुत जोर का बुखार है। यह तो बड़ी मुश्किल हुई। अभी बेगमपुर बहुत दूर है।"

गोपाल का शरीर अब और जोर से कांपने लगा। उनकी कंपकंपी देखकर संदेशवाले यात्री ने कहा, "हम लोग बेगमपुर से आगे कोतलपुर जाएंगे। बेगमपुर से वहां पहुंचने में काफी समय लगेगा। इसलिए आप यहां हवा में बैठे क्यों कांप रहे हैं? गलुई के भीतर जाकर सो जाइए। बेगमपुर आने पर हम आपको जगा देंगे।"

गोपाल भांड़ के साथी नीपू ने भी सलाह दी, "सच तो है, बाहर बैठे रहने से नदी की ठण्डी-ठण्डी हवा और हानि पहुंचाएगी। इसलिए तुम गलुई के भीतर जाकर सो जाओ।"

आखिर सबके कहने पर गोपाल भांड़ कांपते-कांपते जैसे-तैसे उठे और जाकर गलुई के भीतर सो गए।

कुछ देर की यात्रा के बाद बेगमपुर आने पर नीपू ने गोपाल भांड़ को आवाज दी। सुनते ही वह गलुई के भीतर से निकलकर बाहर आए और अपने साथी के साथ घाट पर उतर गये। नाव आगे बढ़ गई।

घाट पर उतरने के बाद गोपाल भांड़ उचक-उचक कर हंसते हुए बोले, "चाचा, घाट की धूप मिलने से बुखार और ठण्ड कुछ कम हो गई है।"

नीपू ने हो-हो कर हंसते हुए कहा, "उस्ताद, धूप लगने से तुम्हारा शीत ज्वर तो कम होगा ही। मैं तो तभी समझ गया था, जब नाव में तुम्हें ज्वर और ठण्ड लगने लगी थी कि तुम्हारा शीत ज्वर संदेश खाने का है। अब यह बताओ सब अकेले ही खा गए या बचाकर कुछ मेरे लिए भी लाए हो?"

गोपाल भांड़ चादर के भीतर से कुछ संदेश निकालकर नीपू को देते हुए बोले, "फेलू हलवाई की दुकान के संदेश का नाम सुनते ही मेरे मुंह में पानी भर आया और फिर तो बुखार के साथ ठण्ड भी सताने लग गई। हांडी में एक भी संदेश नहीं बचा। हाय! हाय रे! बेचारा संदेशवाला क्या सोचता होगा अपने मन में?"

"सोचता क्या होगा," नीपू ने कहा, "चुन-चुन कर गालियां देता होगा।"



गपोड़ी बन्दर

एक बार गोपाल भांड़ एक बारात में वरपक्ष की ओर से शामिल हुए। कन्यापक्ष वाले गोपाल भांड़ को खूब अच्छी तरह से पहचानते थे। इसी कारण कन्यापक्ष के एक मसखरेबाज ने उनकी खिल्ली उड़ाने के विचार से कहा, "गोपाल, तुमने कभी बन्दर देखा है? यहां ढेर सारे बन्दर हैं। वे लोगों पर अत्याचार भी बहुत करते हैं। यदि मनोरंजन करना चाहो तो मैं तुमको ले जाकर उन बन्दरों के बीच बिठा सकता हूं।"

उस मसखरे की बात सुनकर गोपाल भांड़ बोले, "श्रीमान जी, ऐसे मैंने जाने कितने बन्दर देखे हैं। उनकी कोई गिनती नहीं। लेकिन आप जैसा गपोड़ी बन्दर तो आज ही देखने को मिला है। भला इससे बढ़कर और कौन-सा मनोरंजन हो सकता है?"

गोपाल का जवाब सुनकर उस मसखरे का चेहरा एकदम उतर गया। वह आया तो था गोपाल की खिल्ली उड़ाने, लेकिन उसे ही अपना पिण्ड छुड़ाना मुश्किल हो गया। उसकी दशा देखकर वहां उपस्थित लोग हो-हो कर हंसने लगे।

उसी कड़ाही में मछली तलते थे

एक छोटी-सी कड़ाही लिए गोपाल भांड़ कहीं से आ रहे थे। रास्ते में उन्हें देखकर एक गपोड़िए ने आवाज दी, "अरे ओ गोपाल! सुन, यह छोटी-सी कड़ाही लिए कहां से आ रहा है? भला यह भी कोई कड़ाही है? अरे मेरे मामा के घर में एक ऐसी कड़ाही थी कि आज तक वैसी कड़ाही बनी नहीं। उसका दायरा दो कोस था और वह उतनी ही गहरी थी। अब तुम्हीं सोचो, कितनी बड़ी कड़ाही थी। है न, आश्चर्यजनक बात?"

उस गपोड़िए की बात सुनकर गोपाल हंसकर बोले, "तब तुमने कुछ नहीं देखा! मैंने तो इससे भी अजूबा दृश्य देखा है। मेरे दादाजी रोज एक हिलसा मछली लाते और उसे तलकर पूरा का पूरा ही निगल जाते थे।"



"तो इसमें कौन-सी आश्चर्यजनक बात है?" गपोड़िए ने कहा, "तली हुई एक पूरी हिलसा मछली तो हर कोई निगल सकता है।"

"अरे, ओ चाचा, तू जिस हिलसा को निगल जाने की बात कर रहा है, वह साधारण हिलसा नहीं?" गोपाल ने जवाब दिया।

"तो फिर किस हिलसा की बात कर रहा है?" गपोड़ी बोला।

"अरे, मेरे दादू जिस हिलसा को तलकर निगलते थे, वह लम्बाई में डेढ़ कोस और चौड़ाई में एक कोस की होती थी और मुंह की बात तो पूछो ही नहीं? वह एक भारी-भरकम हाथी को निगल सकती थी।"

गोपाल भांड़ की बात सुनकर वह गपोड़ी आश्चर्यचकित फटी-फटी आंखों से उन की ओर देखकर बोला, "इतनी बड़ी मछली तो मेरे बाप-दादा ने भी न कभी देखी, न सुनी। गप्प हांकने के लिए कोई और नहीं मिला क्या? भला बता तो सही, उस बड़ी मछली को किस कड़ाही में तलते थे तेरे दादू?"

"उसी कड़ाही में जो तुम्हारे मामा के घर थी।" गोपाल ने हंसते हुए जवाब दिया।

गोपाल भांड़ के जवाब से उस गपोड़िए की सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई। उसके चेहरे का रंग एकदम पीला पड़ गया और उसने फिर कभी गोपाल भांड़ के सामने गप्प नहीं हांकी।

मां भेंट की बात समझ गईं पर उपहास न समझीं

एक दिन राजसभा में बैठे-बैठे ही गोपाल भांड़ के पेट में अचानक बहुत जोर का दर्द उठा। वह हर सम्भव उपाय करके थक गए, लेकिन दर्द था कि बन्द होने का नाम ही नहीं ले रहा था। वह जब काफी परेशान हो गए तो राजसभा में ही एक किनारे जाकर लेट गए।

कुछ देर बाद हठात् उन्हें जाने क्या सूझी कि मां काली का स्मरण करते हुए बोले, "दुहाई काली मां! मेरा पेट दर्द अच्छा कर दो मां! यह पीड़ा अब सहन नहीं हो रही है मां! मुझे इस कष्ट से छुटकारा दिला दो, मां! मैं सात दिन के भीतर तुम्हें जोड़ा बकरा भेंट करूंगा।"



संयोग की बात कुछ देर बाद गोपाल भांड़ का पेट दर्द कुछ कम हो गया। वह उठकर बैठ गए और एक बीड़ा पान मुंह में डालते हुए बोले, "पेट का दर्द तो अपने आप ही कम हो गया। इसमें मां काली ने कौन-सी करामात की है। फिर मां काली को जोड़ा बकरा देने की जरूरत क्या है।"

इस प्रकार गोपाल हंसते-हंसते सभासदों से बातें करने लगे। तभी कुछ क्षण बाद उनके पेट में फिर दर्द उठा और धीरे-धीरे वह बढ़ता ही गया।

पीड़ा अत्यधिक हो जाने पर वह फिर बोले, "ओ मां काली! मैं तुम्हें जोड़ा बकरा नहीं चढ़ाता क्या? यह तुमने कैसे समझ लिया? मैंने तो यह बात हंसी-हंसी में यूं ही कह दी थी मां। आप भेंट की बात तो समझ गईं मगर मेरा उपहास न समझीं।" और उनका इतना कहना था कि उनका पेट दर्द धीरे-धीरे पुनः कम होने लगा। लेकिन इस बार उनमें इतना साहस नहीं था कि वह मां काली से उपहास जैसी कोई बात फिर अपने मुंह से निकालते।



पैर का दर्द

एक बार अधेड़ उम्र की एक महिला आकर गोपाल भांड़ से बोली, "गोपाल, मेरा लड़का यहां से दस कोस दूर रहता है। उसको एक पत्र लिख दो।"

गोपाल भांड़ ने सिर में हाथ फिराते हुए जवाब दिया, "आपने जो कुछ कहा सब समझ में आ गया दीदी। लेकिन इस समय मैं पत्र नहीं लिख सकता।"

गोपाल मैं बड़ी आशा लेकर आई हूं, दो अक्षर की ही तो बात है। लिख भी दो न।"

"कैसे लिख दूं दीदी! पैर में दर्द है।" गोपाल ने जवाब दिया।

"हंसी में मत टालो, गोपाल। पैर में दर्द है, इससे लिखने का क्या सम्बन्ध, पत्र तो हाथ से लिखोगे। पैर के दर्द से हाथ का क्या सरोकार?" महिला पुनः बोली।

"है दीदी! पैर के दर्द का हाथ से सरोकार है।" गोपाल ने अपनी बात पर बल देते हुए कहा, "अपनी लिखी चिट्ठी मैं ही समझ सकता हूं दूसरा कोई एक अक्षर भी नहीं समझ सकता'। इससे पहले जितनी भी चिट्ठियां लिखीं, उन्हें पढ़ने के लिए मुझे ही जाना पड़ा। अभी-अभी एक चिट्ठी पढ़कर पांच कोस दूर से चला आ रहा हूं। अब पुनः तुम्हारी चिट्ठी लिख कर उसे पढ़ने के लिए दस कोस जाने की हिम्मत मुझमें नहीं है।"

यह कह कर गोपाल हंस पड़े। वह अनपढ़-अशिक्षित महिला गोपाल भांड़ की बात नहीं समझ सकी कि वह अधिक पढ़ना-लिखना नहीं जानते हैं। गोपाल भांड़ को हंसते देख, उसने समझा वह उसकी हंसी उड़ा रहे हैं। वह गोपाल भांड़ पर लाल-पीली होती हुई बरस पड़ी, "आखिर हो तो भांड़ ही न? भंड़ैती छोड़ तुम्हें आएगा भी क्या?"

गोपाल भांड़ ठगे-से उस महिला का मुंह निहारते रहे।

नित्य नव

एक दिन गोपाल भांड़ एक झल्लीवाले को देखकर बोले, "ओ झल्लीवाले! मुझे अपनी झल्ली में बैठाकर राजमहल तक ले चलेगा?"

झल्लीवाला काफी हट्टा-कट्टा और तन्दुरुस्त व्यक्ति था। उसकी झल्ली भी वैसी ही मजबूत और ठोस थी। गोपाल भांड़ की बात सुनकर उसने जवाब दिया, "हुजूर, उचित मजदूरी मिलने पर मैं आपको तो क्या, हाथी के बच्चे को भी ले जा सकता हूं।"

"तो फिर ठीक है। तू मुझे अपनी झल्ली में बैठाकर राजमहल ले चल। मैं तुझे दो रुपए दूंगा," गोपाल ने कहा।

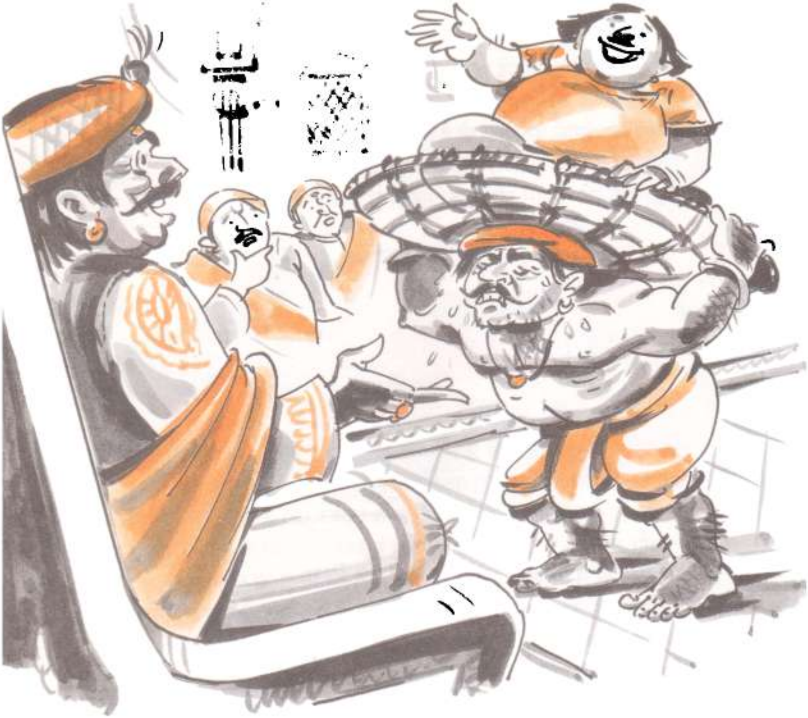
"आइए बैठिए हुजूर," झल्लीवाला बोला।

गोपाल भांड़ तुरन्त झल्ली में बैठ गए। वह उन्हें लेकर राजमहल की ओर चला। रास्ते में लोगों ने गोपाल भांड़ को जब झल्ली में बैठकर जाते देखा तो वे आश्चर्य से कहने लगे, "महाराज की छत्रछाया मिलने से जनाब की हिम्मत बहुत बढ़ गयी है। जान पड़ता है किसी ने टांग-वांग तोड़ दी है। अच्छा हुआ। अब बढ़-चढ़कर बोलने पर कुछ तो ताला लगेगा।"

किसी ने कहा, "नहीं-नहीं, कहीं गिर जाने से भी तो टांग टूट सकती है।"

गोपाल भांड़ के कान में सबकी बातों की भनक पड़ी। लेकिन उन्होंने जवाब किसी को नहीं दिया, यह सोचकर कि यह तो संसार है। यहां असंख्य लोग हैं और उतनी ही प्रकार की बातें। आखिर किस-किस का जवाब देंगे।

जब वह राजमहल पहुंचे तो महाराजा कृष्णचन्द्र और उनके सभासदों की भी निगाह गोपाल भांड़ पर पड़ी। पास आने पर महाराज बोले, "क्यों, गोपाल! झल्ली में बैठकर आ



रहे हो, क्या बात है? किसी ने तुम्हारी टांग तो नहीं तोड़ दी?''

''और अंदाजा लगाइए हुजूर।''

''तब तुम्हारे पीछे चोट लगी है?'' महाराज फिर बोले।

''एकदम गलत! चोट बिलकुल नहीं लगी। ...और सोचिए।''

''तब गिर जाने से तुम्हारी टांग टूट गई है।'' महाराज ने पुनः कहा।

''नहीं, महाराज। आपके सब अनुमान गलत।'' झल्ली से कूद कर बाहर आते हुए गोपाल भांड़ बोले, ''रोज-रोज एक ही तरह से आते हुए अच्छा नहीं लगा। इसलिए आज थोड़ा परिवर्तन किया। इसी को तो कहते हैं हुजूर, नित्य नव।

चिड़िया का गुलाम

महाराजा कृष्णचन्द्र के एक निकट सम्बंधी कृष्णनगर के राजमहल में मेहमान के रूप में रह रहे थे। कोई रोक-टोक न रहने से खूब बढ़-चढ़ कर बातें करते और लोगों का मजाक उड़ाते। उनकी बात से किसी को बुरा लग रहा है, इसकी वह जरा-सी भी परवाह नहीं करते थे। उस मेहमान को गोपाल भांड़ फूटी आंख भी नहीं सुहाते थे। गोपाल भांड़ भी मन ही मन उनसे दुखी थे, लेकिन कहते कुछ नहीं थे। वह मौके की तलाश में थे।

एक दिन गोपाल भांड़ खूब सज-धज कर राजसभा में जा रहे थे। मलमल की धोती, कोसे का कुरता और कंधे पर कीमती रेशमी शाल थी जिस पर चिड़िया बनी हुई थी। रास्ते में ही अचानक महाराज के उस मेहमान से उनकी मुलाकात हो गई। उसने गोपाल भांड़ का मजाक उड़ाते हुए कहा, "गोपाल, तुम्हारी सज-धज से ऐसा लगता है, मानों कोई चिड़िया का गुलाम जा रहा है।"

गोपाल भांड़ भला यह मौका कब चूकने वाले थे। वह जाने कब से इसकी तलाश में थे। हंसकर बोले, "हुजूर, फिर देर किस बात की? चिड़िया के इस गुलाम को अपनी बेगम देकर पकड़ लीजिए!"

मेहमान को काटो तो खून नहीं। गोपाल भांड़ के जवाब से उनकी बोलती बन्द हो गई। इसके बाद उन्होंने फिर कभी गोपाल भांड़ का उपहास करने की कोशिश नहीं की।



गंगा-यात्रा

महाराजा कृष्णचन्द्र के दरबार में गोपाल भांड़ के अलावा हास्यराम नाम का एक और भांड़ भी आ गया। वह जिस दिन से आया, उसी दिन से उसे ख्याति मिलने लगी थी। लेकिन गोपाल भांड़ को उसकी मिलती प्रसिद्धि से कोई ईर्ष्या न थी। वह इस सम्बन्ध में हमेशा यही कहते—जिसके भाग्य में जो है, वह उसे मिलेगा ही। हास्यराम भी कभी गोपाल भांड़ से जलन नहीं रखता था। धीरे-धीरे वह भी महाराज का प्रियपात्र हो गया।

एक दिन महाराज ने गोपाल को एकान्त में बुलाकर कहा, "गोपाल, मैंने सुना है तुम हास्यराम से ईर्ष्या-भाव रखते हो।"

"बिलकुल नहीं हुजूर।" गोपाल भांड़ बोले, "जिसके भाग्य में जो है, वह उसे मिलेगा ही फिर हम ईर्ष्या क्यों करेंगे?"

"तुम किसी काम के नहीं हो," महाराज ने कहा, "हास्यराम को इतने दिन आए हो गये, लेकिन उसके सामने तुमने अपनी श्रेष्ठता का कभी प्रदर्शन नहीं किया। वह जबसे आया है तब से मैं देख रहा हूं, तुमसे आगे बाजी मार ले जाता है और तुम मुंह देखते रह जाते हो। अब तो मैं तुम्हें तभी योग्य समझूंगा, जब हास्यराम को हरा दोगे।"

"हुजूर, आपका आदेश मिले तो मैं हास्यराम की बोलती बन्द कर दूं। यह कोई बड़ी बात नहीं है।" गोपाल भांड़ बोले।

"ठीक है, मैंने आदेश दिया। तुम अपने को श्रेष्ठ साबित करो," महाराजा ने कहा।

महाराज कृष्णचन्द्र का आदेश मिलते ही हास्यराम को नीचा दिखाने के लिए गोपाल भांड़ मौके की तलाश में रहने लगे । एक दिन हास्यराम के नौकर से उन्हें मालूम हुआ कि हास्यराम कल सवेरे घर जाने वाले हैं। उन्होंने घर ले जाने के लिए चिड़वा और दही के लिए पेशगी भी दुकानदार को दे दी है। साथ ही अपने परिचित एक लड़के को सवेरे ही दो हिलसा मछली कमरे में पहुंचा देने के लिए निर्देश भी दे दिया है।

हास्यराम का घर कृष्णनगर से पांच कोस दूर था। दूसरे दिन सवेरे- सवेरे ही गोपाल भांड़ हास्यराम के घर पहुंच गए। हास्यराम की मां गोपाल भांड़ को अच्छी तरह पहचानती थी। उसने देखते ही पूछा, "गोपाल, अचानक इधर कैसे?"

"अपने एक रिश्तेदार के घर आया था मां। जाते समय सोचा आपका भी दर्शन करता चलूं। इसके अलावा मैंने ऐसा सुना कि आप बहुत बीमार हैं, फिर तो विशेष रूप से देखने चला आया।"

"तुमने ठीक ही सुना। बीमार तो थी, लेकिन अब तबीयत कुछ अच्छी है। शरीर तो ढल

ही चला है। मौत कब आ जायेगी कुछ कहा नहीं जा सकता। अब जब आ गए हो तो दोपहर का भोजन करके जाना," बुढ़िया बोली।

"नहीं मां। इतना समय नहीं है," गोपाल ने जवाब दिया, "दोपहर तक मुझे कृष्णनगर पहुंचना जरूरी है। वहां एक आवश्यक काम है।"

"जब मां के पास आए हो तो ऐसे कभी नहीं जाने दूंगी। कुछ जलपान करते जाओ।" और हास्यराम की मां ने गोपाल भांड़ को नाश्ता पानी कराकर ही विदा किया।

वहां से गोपाल भांड़ सीधे कृष्णनगर के लिए चल पड़े। लगभग तीन कोस रास्ता तय कर लेने के बाद अचानक सामने से आते हास्यराम से उनकी मुलाकात हो गई। दो हिलसा मछली, चिड़वा और दही की हांडी लिए हास्यराम प्रसन्नचित्त अपने घर की ओर चले जा रहे थे। गोपाल भांड़ को देखते ही वह बोले, "गोपाल भाई, इधर कहां गए थे?"



गोपाल भांड़ ने दुखी मन से कहा, "गया तो था अपने एक सम्बन्धी के घर। वापसी में तुम्हारे घर भी होते हुए आ रहा हूं। हास्यराम भाई, तुम जरा जल्दी अपने घर जाओ।"

गोपाल भांड़ की बात सुनकर हास्यराम को एक झटका-सा लगा। वह उतरे मन से बोले, "क्यों, क्या हुआ मेरे घर में?"

"ऐसा तो कुछ नहीं हुआ। लेकिन तुम जरा जल्दी जाओ तो अच्छा है," गोपाल भांड़ पुनः बोले।

"गोपाल भाई, ऐसा क्या हो गया? बतलाओ भी न?" हास्यराम ने घबराकर पूछा।

गोपाल रोनी सूरत बनाकर बोले, "उमर होने पर सबको ही जाना पड़ता है। लेकिन जानते हो संसार में मां से बढ़कर कोई नहीं होता। उमर ज्यादा होने से क्या हुआ, मां—मां होती है, उसकी कोई बराबरी नहीं।"

गोपाल की बात सुनकर हास्यराम एकदम रो पड़े और रोते-रोते ही बोले, "मेरी मां क्या अब इस दुनिया में नहीं है? क्या वह हमेशा के लिए गंगा-यात्रा पर गई?"

"इतना अधीर क्यों होते हो भाई।" गोपाल भांड़ ने सान्त्वना भरे स्वर में कहा, "जीना-मरना तो अपने हाथ में नहीं है। तुम्हारी मां की उमर भी तो कम नहीं थी। यदि समय पर गंगा-यात्रा...।"

गोपाल भांड़ का वाक्य अभी पूरा भी नहीं हुआ कि हास्यराम चिल्ला पड़े, "नहीं-नहीं-नहीं।" वह अशांत और दुखी हो दोनों हिलसा मछली, चिड़वा और दही की हांडी गोपाल भांड़ को थमाते हुए बोले, "इन्हें अब तुम अपने बाल-बच्चों को खिला देना।" और वह रोते-रोते तेज कदमों से अपने घर की ओर चल पड़े। इधर हास्यराम से सब सामान लेकर गोपाल भांड़ हंसते-हंसते अपने घर आए।

उधर घर पहुंचकर जब हास्यराम को सच्चाई का पता चला तो वह ठगे से रह गए। वह मन ही मन गोपाल भांड़ की बुद्धि की प्रशंसा करने लगे, गोपाल ने अपने मुंह से यह कभी नहीं कहा कि उनकी मां मर गई या गंगा-यात्रा पर गई। यह तो उन्होंने गोपाल भांड़ के कहने का खुद ही अर्थ लगा लिया था।

महाराजा कृष्णचन्द्र को जब गोपाल भांड़ की इस करामात का पता चला तो वह हंसते-हंसते लोट-पोट हो गए। आखिर उन्हें यह बात स्वीकार करनी ही पड़ी कि भंड़ैती में गोपाल की कोई बराबरी नहीं कर सकता।





यही कोई डेढ़ हाथ मात्र

एक दिन राजसभा में गोपाल भांड़ ने अनेक बातें कह डालीं। यह बात सभी को मालूम थी कि गोपाल भांड़ के पेट में कोई बात पचती नहीं है। उस दिन सभासदों के सामने उन्होंने न कही जाने लायक बातें भी बिना शर्म और झिझक के कह डालीं। इस पर महाराजा कृष्णचन्द्र बहुत नाराज हुए और बोले, "गोपाल, तुम एकदम गधे हो। कब क्या कहना चाहिए और क्या नहीं इसकी तमीज तुम्हें आज तक नहीं आई।"

मंत्री महोदय भी रोष में आ गए। उन्होंने गुस्से भरे स्वर में कहा, "गोपाल, तुममें और गधे में कितना फर्क है। क्या कोई बतला सकता है?"

गोपाल भांड़ ने अपने और मंत्री महोदय के आसन की दूरी मापते हुए कहा, "यह फर्क बहुत ज्यांदा नहीं है, मंत्री जी। मात्र डेढ़ हाथ।"

गोपाल के इस निर्भीक उत्तर पर सभी सभासद हंस पड़े। मंत्री जी का चेहरा एकदम फक पड़ गया।

गोपाल भांड़ को लज्जित करने के विचार से एक बार महाराजा कृष्णचन्द्र भरी सभा में बोले, ''गोपाल, कल रात मैंने एक सपना देखा। बड़ा विचित्र सपना था।''

गोपाल भांड़ ने कौतूहल से पूछा, ''हुजूर, सपने की बात कुछ खोलकर कहें।''

महाराज ने हंसकर कहा, ''गोपाल, उस सपने की बात तुम्हारे लिए न सुनना ही अच्छा है।''

लेकिन जब गोपाल भांड़ सुनने को बहुत अधीर हो उठे तो महाराज बोले, ''नहीं मानते तो सुनो। मैंने सपना देखा कि तुम और मैं कृष्णनगर राज्य से बहुत दूर एक अनजाने राज्य में जा पहुंचे हैं। वहां चारों ओर अंधकार छाया हुआ है। हमारे दो तरफ तालाब हैं। एक तालाब में गंदगी ही गंदगी भरी हुई है और दूसरा तालाब दूध से। इतने में देखा तुम्हारा पांव फिसला और तुम अचानक गंदगी से भरे तालाब में गिर गए और डूबने-उतराने लगे। मैं तुम्हें उसमें से निकालने का उपाय सोच ही रहा था कि मेरा भी पांव फिसल गया और मैं दूध वाले तालाब में जा गिरा। कुछ देर बाद मैं तैरकर जब दूधवाले तालाब से बाहर आया तो देखा कि तुम उस समय भी गंदगी वाले तालाब से बाहर नहीं निकल सके हो। जितना ही हाथ-पांव चलाकर निकलने की कोशिश करते हो उतना ही नीचे धंसते जाते हो। इतने में ही मेरी नींद उचट गई।''

महाराज के मुख से उनके सपने की बात सुनकर सारे दरबारी गोपाल भांड़ की ओर देखकर जोर से हंस पड़े।

लेकिन गोपाल भांड़ पर महाराज के सपने और दरबारियों के हंसने का कोई असर न पड़ा। कुछ क्षण बाद वह भी मुस्कराकर बोले, ''महाराज, कल रात मैंने भी कुछ ऐसा ही सपना देखा।''

''तो इसका मतलब है कि तुमने भी यह देखा कि तुम उस गंदगीवाले तालाब में गिर गए हो?'' महाराज ने हंसकर कहा।

दरबारीगण एक बार फिर ठहाका लगा उठे।

''जी हुजूर! सच बात स्वीकार करने में संकोच कैसा? लेकिन, हुजूर आपकी नींद खुल गई, इसलिए आगे क्या हुआ, यह आप नहीं देख सके। किन्तु मैंने इसके आगे भी देखा,'' मुस्कराकर गोपाल ने कहा।

''तुमने क्या देखा, गोपाल।'' महाराज आगे की बात जानने के लिए उत्सुक हो उठे।

''आगे न सुनना ही अच्छा होगा हुजूर।''



महाराज सब कुछ सुनने के लिए आतुर हो उठे। गोपाल ने मुंह बनाकर कहा, "ठीक है हुजूर आप हठ करते हैं तो सुनिए। मैंने आगे देखा आप दूधवाले तालाब से निकल आए। कुछ देर बाद उस गंदगी भरे तालाब से मैं भी निकल आया। दोनों के शरीर में चिपचिपाहट थी। आपके शरीर में मलाई और मक्खन की तथा मेरे शरीर में गंदगी की।"

"फिर...?" महाराज ने पूछा।

"हम दोनों ने अपना-अपना शरीर साफ करना चाहा। लेकिन वहां दूर-दूर तक कहीं भी पानी का नामोनिशान न था।"

"फिर...?" महाराज ने पुनः पूछा।

"फिर आपने ही सुझाव दिया कि गोपाल घर तो जाना ही पड़ेगा और यहां पानी-वानी नहीं कि शरीर साफ किया जाए। इसलिए ऐसा करो कि तुम मेरा शरीर चाटकर साफ कर दो और मैं तुम्हारा। इसके बाद हम दोनों में परस्पर चाटा-चाटी का व्यापार शुरू हो गया।"

गोपाल भांड़ की बात समाप्त होते ही सारे दरबारी ठहाका मारकर हंस पड़े। लेकिन महाराज के चेहरे की ओर देखते ही सबकी हंसी गायब हो गई। सारा दरबार मौन-मूक, स्तब्ध हो गया। महाराजा कृष्णचन्द्र का चेहरा एकदम उतर गया था। वह मन ही मन बहुत परेशान हो उठे। वह भीतर ही भीतर पश्चात्ताप कर रहे थे कि गोपाल भांड़ के पीछे पड़कर उन्होंने भारी भूल की। उन्होंने अपने दिल में यह निश्चय किया कि वह भविष्य में भूलकर भी गोपाल भांड़ को कभी नहीं छेड़ेंगे। कहां तो चले थे वह गोपाल भांड़ को शरमिन्दा करने, कहां खुद को ही शरमिन्दा होना पड़ा।





कृष्ण की बेगार

कृष्णनगर के महाराजा कृष्णचन्द्र शक्ति के उपासक थे। अपने राज्य की प्रजा के लिए उनका आदेश था, 'सब लोग शक्ति-नाम का जाप करके ही जल ग्रहण करेंगे। यदि यह पता चल गया कि किसी ने शक्ति-नाम का जाप किए बिना ही जल ग्रहण किया है तो उसे सजा भोगनी होगी।'

महाराजा ने एक बार गोपाल भांड़ सहित अपने सभी सभासदों को भोजन पर निमंत्रित किया। भोजन का थाल सामने आने पर सबने खाना आरम्भ कर दिया। लेकिन गोपाल भांड़ ने अन्न को हाथ नहीं लगाया।

उनकी बगल में ही मंत्री महोदय भी भोजन करने बैठे थे। उन्होंने जब गोपाल भांड़ को चुपचाप बैठे देखा तो पूछा, "ओ गोपाल! तुम क्यों नहीं खा रहे हो?"

"ठहरिए, मंत्री जी! पहले कृष्ण की बेगार कर लूं।" गोपाल ने मुस्कराकर कहा। और फिर गोपाल भांड़ भोजन की थाली पर बैठे-बैठे शक्ति-नाम का जाप करने लगे। उनकी देखा-देखी दूसरों ने भी भोजन करना बन्द कर शक्ति-नाम का जाप किया। उसके बाद भोजन शुरू किया।



सबको देखा—किसी को नहीं देखा

गोपाल भांड़ की शादी को कई एक माह बीत गये थे। पत्नी अपने मायके में थी। मां के बार-बार कहने पर वह उसे घर लाने के लिए ससुराल पहुंचे। यह लोक-प्रचलित रीति है कि लोग जब अपने किसी सम्बन्धी के यहां जाते हैं तो खाली हाथ नहीं जाते। इसी कारण गोपाल भांड़ अपने साथ मिठाई, चिड़वा, दही की हांडी और दो बड़ी-बड़ी हिलसा मछली लेकर ससुराल गए। वहां सास, ससुर, साली-साला सबको उन्होंने देखा, लेकिन घूंघट डाले अपनी नई नवेली पत्नी उन्हें कहीं नहीं दिखी।

सास-ससुर ने पहली बार आए जमाई का खूब आदर-सत्कार किया। सास सब समय जमाई के पास रहकर उसकी सुख-सुविधा का ध्यान रखने लगी।

सास-ससुर के सामने साला और साली से अपनी पत्नी के बारे में बात करने में उन्हें कुछ लज्जा-सी महसूस हुई। वह सोचने लगे हो सकता है दरवाजे की ओट में घूंघट डाले वह ताक-झांक करते हुए दिख जाए। लेकिन कुछ देर बाद उस ओर से भी उन्हें निराशा ही मिली।

इस प्रकार काफी समय बीत गया। लेकिन अपनी नई पत्नी की झलक उन्हें न दिखी। तब गोपाल भांड़ अधीर होकर सब के सामने ही बोले, "सबको देखा—किसी को नहीं देखा?"

गोपाल भांड़ की साली बहुत चतुर थी। उनकी बात का मतलब समझकर बोली, "जीजा जी, आप जिसे देखने के लिए व्याकुल हैं, वह यहां से दस कोस दूर है। आज ही सवेरे मौसी के घर गई है। तीन दिन बाद आएगी। मैं आपके मन की दशा समझती हूं, जीजा जी! इस दशा में सब कुछ दिखाई देकर भी कुछ नहीं दिखाई देता।"

राजसभा-परित्याग

गोपाल भांड़ इतने निडर, निर्भीक, मस्तमौला और हाजिरजवाब थे कि जवाब देते समय ऊंच-नीच और छोटे-बड़े का लिहाज बिलकुल नहीं रखते थे। किसी ने कुछ कहा और उन्होंने तुरन्त उसका जवाब दिया। चाहे उनके जवाब से किसी का दिल दुखे या वह नाराज हो, इसका जरा-सा भी ख्याल नहीं करते थे। इसीलिए एक दिन महाराजा कृष्णचन्द्र ने किसी बात पर चिढ़कर राज दरबार के एक प्रहरी से कहा, "इसकी हिम्मत बहुत बढ़ गई है। इसकी गर्दन पकड़कर राजसभा से बाहर कर दो। इसका जितना बड़ा मुंह नहीं है, उससे बड़ी बातें करता है।"

गोपाल भांड़ अविचलित स्वर में बोले, "महाराज, मेरी गर्दन पकड़ने की जरूरत नहीं, मैं आपकी राजसभा का परित्याग कर खुद ही चला जाता हूं और तीन दिन के भीतर इस राज्य को भी छोड़ दूंगा।"

यह कहकर वह दुखी मन से अपने घर चले आए। दूसरे दिन पास-पड़ोस के लोगों को सुनाते हुए पत्नी से बोले, "घर का सारा माल-असबाब बांध लो। हम इस राज्य को छोड़ रहे हैं।"



सुनकर पत्नी हाय-हाय कर रोती हुई बोली, "यह क्या हो गया तुम्हें? ऐसा सुखी-सम्पन्न सोने-जैसा राज्य छोड़कर और कहां जाएंगे?"

"बहुत विराट है ईश्वर की यह सृष्टि, कहीं न कहीं सिर छिपाने को जगह मिल ही जाएगी," गोपाल ने कहा।

गोपाल भांड़ की बात पर उनकी पत्नी जोर-जोर से रोने लगी। उसका रोना-धोना सुनकर पास-पड़ोस के लोग जमा हो गए।

गोपाल भांड़ ने सबके सामने ही फिर कहा, "रोने-धोने से कुछ नहीं होगा, जाओ,

माल-असबाब बांधो। जब राजा ही हम पर नाराज हो गया है तो इस राज्य में रहने से क्या लाभ?"

पति के पुनः कहने पर पत्नी सिसकती हुई उठी और एक-एक कर सामान बांधने लगी।

गोपाल भांड़ दुखी होकर कृष्णनगर राज्य का परित्याग कर रहे हैं, यह खबर महाराजा कृष्णचन्द्र तक भी जा पहुंची। सुनते ही उन्होंने गोपाल भांड़ को बुला लाने के लिए आदमी दौड़ाया। उस दिन नाराज होकर उन्होंने गोपाल भांड़ को राजसभा से निकाला अवश्य था, लेकिन मन से वह गोपाल भांड़ को बहुत प्यार करते थे। इसीलिए जब उन्हें पता चला कि गोपाल भांड़ कृष्णनगर राज्य छोड़ कर जा रहे हैं तो उन्हें बड़ा आघात लगा। इस समाचार से वह विक्षिप्त से हो उठे।

गोपाल भांड़ संदेश पाकर महाराजा के पास आए। उन्हें देखते ही महाराज बोले, "क्या सचमुच ही तुम राज्य छोड़कर जा रहे हो?"

"जी महाराज," गोपाल भांड़ ने गम्भीर स्वर में जवाब दिया।

"लेकिन मैंने तुम्हें राजसभा से निकाला था। राज्य छोड़ने का तो आदेश नहीं दिया," महाराज बोले।

"यह सच है हुजूर कि आपने राज्य छोड़ने का आदेश नहीं दिया।" गोपाल भांड़ ने जवाब दिया, "लेकिन आप ही विचार कीजिए, आपका राज दरबार ही हमारी रोजी-रोटी का साधन था। आप ही हमारे अन्नदाता थे और जब अन्नदाता ही नाराज हो गया तो हमारे यहां रहने से क्या लाभ?"

"गोपाल, तू ही बोल, मुझे क्या हो गया है? न तो तुझे छोड़ पा रहा हूं न ही तुझे अपने पास रख पा रहा हूं। मुझे कुछ समझ में नहीं आ रहा है। बता न गोपाल! ऐसा क्या हो गया मुझे?" महाराज मंद स्वर में बोले।

गोपाल ने हंसकर कहा, "यह प्रेम का प्रताप है, महाराज। आप मेरी प्रेम-डोर से बंध गए हैं, इसलिए ऐसा हो रहा है।"

गोपाल भांड़ की बात पर महाराज और वहां उपस्थित सभी लोग खिलखिलाकर हंस पड़े।

इसके बाद महाराज ने गोपाल भांड़ को एक हजार रुपए इनाम देते हुए कहा, "याद रख गोपाल। मेरे आदेश के बिना इस राज्य के बाहर तू कदम नहीं रख सकता। राज्य छोड़कर जा रहे हैं। जा, अब घर जा। घरवाली चिन्ता कर रही होगी। कल से ठीक समय पर दरबार में आ जाना।"

इनाम के रुपए शाल के कोने में बांध गोपाल भांड़ प्रसन्नचित घर की ओर चल दिए।

कृष्ण-प्राप्ति

अपना मकान पक्का बना लेने पर गोपाल भांड़ का हाथ बिलकुल खाली हो गया था। घर का खर्च बढ़ जाने से उन्हें और उनके परिवार को अपने दिन तंगी में काटने पड़ रहे थे। मकान बनवाने के बहाने वह महाराजा कृष्णचन्द्र से काफी रुपया झाड़ चुके थे। अब और रुपये मांगने में उन्हें संकोच हो रहा था। फिर बार-बार मांगने पर महाराज दे ही देंगे, इसकी भी आशा नहीं थी।

सोचते-सोचते उन्हें एक उपाय सूझा। उन्होंने अपने लड़के को बुलाकर फुसफुसाकर उसके कान में कुछ कहा और महल में भेज दिया।

लड़का मुंह लटकाये हुए महाराजा के सामने खड़ा हो गया। उसका उतरा हुआ चेहरा देखकर महाराजा ने पूछा, ''क्या बात है, बेटा तुम इतना घबराये हुए क्यों हो?''

लड़का उदास स्वर में बोला, ''बाबा को कृष्ण-प्राप्ति हुई है।''

सुनते ही महाराज पर जैसे वज्र गिरा। गोपाल भांड़ उन्हें अत्यन्त प्रिय थे। वह एकदम 'हाय! हाय!' कर उठे। उन्हें हार्दिक दुख इस बात का हुआ कि गोपाल भांड़ की उम्र अभी कृष्ण-प्राप्ति की नहीं थी।

उन्होंने खजांची को तुरन्त आदेश दिया कि गोपाल भांड़ के लड़के को दो हजार रुपये इसी समय दे दिए जाएं। बाद में श्राद्ध-कर्म के लिए और भी कुछ रुपये देंगे, यह कहकर उन्होंने लड़के को घर लौटने के लिए कहा।

गोपाल भांड़ का लड़का रुपये की पोटली लिए घर आया। दूसरे दिन महाराज को खबर मिली कि गोपाल भांड़ तो बिलकुल स्वस्थ हैं और अपने बरामदे में बैठे हुक्का गुड़गुड़ा रहे हैं। उनके मरने की खबर बिलकुल झूठी थी।

खबर सुनकर महाराजा कृष्णचन्द्र को बाप-बेटे दोनों पर बहुत गुस्सा आया। वह आग बबूला हो उठे। उन्होंने तुरन्त गोपाल भांड़ को बुलाने के लिए आदमी भेजा।

संदेश मिलते ही गोपाल भांड़ महाराज के सामने उपस्थित हुए। उन्हें देखते ही महाराज ने गुस्से भरे स्वर में कहा, ''तुम और तुम्हारा लड़का दोनों ही ठग और लुटेरे हो। तुम्हारे परामर्श पर ही तुम्हारा लड़का मुझ से दो हजार रुपये ठग कर ले गया। क्यों न तुम्हें एक सौ कोड़ों की सजा दी जाए?''

गोपाल भांड़ जरा भी विचलित नहीं हुए। डांट सुनने के बाद अपने शरीर पर पड़े शाल के नीचे से पीतल की बनी अति सुन्दर एक कृष्ण की मूर्ति बाहर निकालकर बोले, ''महाराज, मेरा लड़का आपसे बिलकुल झूठ नहीं बोला। मेरे लड़के ने यह कभी नहीं कहा कि मैं मर



गया हूं। उसने 'कृष्ण-प्राप्ति' की बात कही। कल रात भोर वेला में जब मैं गंगा-स्नान के लिए गया तो नदी के भीतर से भगवान कृष्ण की यह मूर्ति मिली। मैंने इस सुन्दर मूर्ति की स्थापना का विचार किया और यही खबर आपको देने के लिए मेरा लड़का आपके पास आया था। लेकिन उसकी पूरी बात सुनने से पहले ही आपने कृष्ण-प्राप्ति का मतलब मेरे मरने से लगा लिया। बताइये इस में लड़के का क्या दोष है?''

सुनकर महाराजा कृष्णचन्द्र स्तब्ध और अवाक् रह गए। उन्होंने मन ही मन गोपाल भांड़ की बुद्धि की प्रशंसा की। सारी राजसभा ठहाका मार कर हंस पड़ी।





Rs. 25.00 H 219

ISBN 81-7011-532-0